सितम्बर २००७

दादावाणी

आत्मविज्ञानी 'ए.एम.पटेल' के भीतर प्रकट हुए

'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो'

तंत्री तथा संपादक :
दीपक देसाई
वर्षः २, अंक : ११
अखंड क्रमांक : २३
सितम्बर २००७

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ वे,
पो.ओ.: अडालज,
जि.: गांधीनगर-३८२४२१
फोन : (०७९)३९८३०१००
e-mail :
dadavani@dadabhagwan.org
अहमदाबाद : (०७९) २७५४०४०८, २७५४३९७९
मुंबई : (०२२) २४१३७६१६
राजकोट त्रिमंदिर :
९९२४३ ४३४१६
U.S.A. : 785-271-0869
U.K.: 020-8204-0746
Website : www.dadashri.org
www.dadabhagwan.org

Publisher, Owner & Printed by :
Deepak Desai on behalf of
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Printer/Press :
Mahavideh Foundation
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता फी)
१५ साल का
भारत : ८०० रूपया
यु.एस.ए. : १०० डॉलर
यु.के. : ७५ पाउन्ड
वार्षिक
भारत : १०० रूपया
यु.एस.ए. : 10 डॉलर
यु.के. : 7 पाउन्ड
भारत में D.D. / M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से भेजे।

दादावाणी

न किया जाए रक्षण, प्रकृति का-अहंकार का

संपादकीय

अक्रम मार्ग द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् महात्माओं को आत्म जागृति की शुरूआत हो जाती है। खुद के दोष दिखाई देने लगते हैं। सामनेवाले को निर्दोष देखने का पुरुषार्थ प्रारंभ होता है। पूर्वावतार का भरा हुआ प्राकृतिक माल निकलता रहता है, पर उसका निपटारा करने का अनुभव नहीं होने के कारण और नासमझी एवम् पूर्वाभ्यास को लेकर उसका रक्षण हो जाता है। कभी अपमान होने पर सामनेवाले को दोषी देखा जाता है और अहंकार की रक्षा हो जाती है। वहाँ परम पूज्य दादाश्री ने अपने स्वानुभव में इस अहंकार को सारे पहलूओं से देखकर, उसका रक्षण नहीं हो, इसकी जागृति रखते हुए, खुद ने कैसे निपटारा किया, यह सारी बातें प्रस्तुत अंक में निखालिसता से समझाई है।

वे ज्ञान प्राप्त महात्माओं को बताते हैं कि उन्हों ने हँसते मुख (अपमान का) ज़हर कैसे पीया? पीते समय क्या जागृति रखी? जिसमें विशेष रूप से, खुद के साथ बातचीत के जरिये जुदापन की जागृति कैसे रखी? और एक कानून को सदैव जागृति में रखा कि हजारों लोगों के बिच में भी खुद ने अपनी भूलों की तरफ़दारी कभी भी नहीं की।

अक्रम विज्ञान में ज्ञान प्राप्ति के साथ ही चार्ज अहंकार खतम हो जाता है और डिस्चार्ज अहंकार शेष रहता है। उस अहंकार की तरफ़दारी करने से या आज्ञा का कम-ज्यादा पालन करने से वह अहंकार सजीवन नहीं होता पर यदि पाँच आज्ञा का पालन समूचा छोड़ दिया जाये तो अहंकार सजीवन हो जाये और फिर से अज्ञानी जैसी दशा हो जाये।

परम पूज्य दादाश्री यहाँ वैज्ञानिक तथ्य समझाते हैं कि खुद की प्रकृति को माफ़ किया जाये पर उसकी तरफ़दारी कतई नहीं की जाये। क्योंकि माफ़ी में खुद जुदा रह पाये और तन्मयता नहीं होती, तब फिर चाहे कैसी भी अपनी प्रकृति निकले, उसका निपटारा ही होता है।

महात्माओं को ज्ञान संबंधी सारी समझदारी होती है, पर उलटी-सीधी प्रकृति निकलती ही रहती है और उसे बदलने के लिये जीवित अहंकार का साधन तो है नहीं, तब फिर इस अवस्था में क्या किया जाये? परम पूज्य दादाश्री इसके लिए एक अनूठा उपाय बताते हैं कि प्रकृति के प्रति वीतराग हो जाइये, न राग, न द्वेष। प्रकृति की तरफ़दारी भी मत करना और उसे माफ़ी दे दीजिये।

दोषों से मुक्त होने के लिये, पहले तो परम पूज्य दादाश्री दोषों के हर पहलू की पहचान कराते हैं और प्रत्येक स्तर की समझ देते हैं कि हमारे लिए क्या हितकारी है और क्या नहीं? उसमें से बाहर निकलने के मार्ग भी दिखलाते हैं और अंत में विज्ञान की बातें यथातथ्य बता देते हैं कि यदि प्रकृति की तरफ़दारी हो जाये तो उसे जानिये। जाननेवाले को अपने मूल स्थान में लाकर रख देते हैं।

ऐसे प्रकृति (मंगलदास) और अहंकार (बाबा) के प्रतिपक्ष में जागृति को ऐसे सँजोया जाये कि दोषों का रक्षण नहीं हो पाये और ज्ञानदशा की ऊँची श्रेणियाँ चढ़ पायें। इसके सारे गुर (उपाय) प्रस्तुत अंक में संकलित हुए हैं, जो महात्माओं को सूक्ष्म पुरुषार्थ में जागृति रखने को प्रेरित करेंगे। **दीपक देसाई ....**

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रुपांतर है। कोष्ठक में दिये गये शब्द या तो अंग्रेजी शब्द का अर्थ है अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किये गये वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। पाठक जहाँ पर भी चंदुभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर कोई बात आप समझ न पायें तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधार कर समाधान प्राप्त करें। भाषांतर में कोई कमी नज़र आये तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ऐसी क्षतियों के लिये हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

न किया जाए रक्षण, प्रकृति का-अहंकार का

अहंकार की पहचान से कार्य होता सरल

प्रश्नकर्ता : हम चाहे कितना भी करें मगर सामनेवाला नहीं सुधरे तो क्या करना?

दादाश्री : खुद सुधरे नहीं हैं और लोगों को सुधारने निकले इसलिए तो लोग उलटे बिगडे हैं। सुधारने जाए कि बिगड़े। खुद ही बिगड़ा हुआ हो फिर क्या हो? खुद ही सुधरना सब से आसान है। हम सुधरे नहीं हों और दूसरों को सुधारने जाएं वह 'मीनिंगलेस' (अर्थहीन) है। आप नहीं सुधरे तब तक हमारे शब्द भी असर नहीं करते। आप कहें कि, 'ऐसा मत करना'। तब सामनेवाला कहेगा कि, 'हम तो ऐसा ही करनेवाले हैं।' यह तो सामनेवाला उलटे ज्यादा टेढ़ा हुआ।

इसमें अहंकार की आवश्यकता ही नहीं है। अहंकार से सामनेवाले को धमकाकर काम करवाने जाएं तो वह और बिगड़ेगा। ज़हाँ अहंकार नहीं है वहाँ उसे सभी सदा 'सिन्सियर' होते हैं, वहाँ 'मोरालिटी' होती है।

हमारा अहंकार नहीं होना चाहिए। अहंकार सभी को अखरता है। छोटे बच्चे को भी ज़रा-सा 'कमअक्ल, मूरख, गधा' कह दिया तो वह भी टेढ़ा होगा और 'बेटे, तू तो बहुत सयाना है' कहने पर तुरंत मान जाता है।

प्रश्नकर्ता : यदि उसे 'बड़ा सयाना है' कहेंगे तो भी वह बिगड़ेगा।

दादाश्री : मूरख कहने पर भी खफा होगा और (ज्यादा बार) बड़ा सयाना कहने पर भी बिगड़ेगा। क्योंकि सयाना कहने पर उसके अहंकार को 'एन्करेजमेन्ट' (प्रोत्साहन) मिल जाए और मूरख कहा तो उलटा 'सायकोलोजिकल इफेक्ट' होता है। सयाने मनुष्य को २५-५० बार मूरख कहने पर उसे वहम हो जाए कि, 'वास्तव में मैं कहीं पागल तो नहीं हो गया न?' ऐसा सोचते-सोचते वह पागल हो जाए। इसलिए मैं पागल को भी तेरे जैसा सयाना तो इस जगत् में कोई नहीं है, ऐसा कह-कहके 'एन्करेजमेन्ट' देता रहता हूँ। इस जगत् में सदा ही 'पोझिटिव' लेना चाहिए। 'नेगेटिव' की ओर कदम मत बढ़ाना। 'पोझिटिव' का इलाज होगा। मैं आपको सयाना कहूँ और अगर आपका अहंकार अधिक मात्रा में बढ़ जाए तो मुझे थप्पड मारना (अहंकार को ठीकाने लाना) भी आता है, वर्ना वह (अहंकार) उलटी राह चल पड़े। और यदि उसे 'एन्करेज' नहीं करें तो वह आगे बढ़े भी नहीं!

'अहंकार नुकसानदेह है' ऐसा जान लें तब से ही सारा काम सरल हो जाए। अहंकार का रक्षण करने जैसा नहीं है। अहंकार खुद ही अपना रक्षण कर ले ऐसा है।

अहंकार का रक्षण किस लिए ?

अहंकार तो ज्ञेय स्वरूप है, आप खुद (आत्मा) ज्ञाता हो। ज्ञेय-ज्ञाता का संबंध है। वहाँ ज्ञेय का रक्षण तो नहीं कर सकते न? एक अहंकार (ज्ञेय) का रक्षण किया मतलब सारे ज्ञेयों का रक्षण करना पड़े, क्योंकि सभी ज्ञेय हैं। ज्ञेय अनंत हैं।

अब तो 'अदीठ' तप (आंतरिक तप) करना है। अहंकार तन्मयाकार न हो जाएं इसका ध्यान रखना है। जागृति रखना वही तप, अदीठ तप। यह अदीठ तप करना पड़े, क्योंकि अनादि तन्मयाकार होने की आदत जो है, वह फीकी पड़ती जाए। अहंकार फीका पड़ता जाए मतलब हल निकलता जाए। निश्चय किया यानी तप होता ही रहे।

जिस अहंकार से कोई बरकत नहीं हुई, यहाँ-वहाँ ठोकरें लगी, खूबसूरत हो फिर भी हर जगह बदसूरत दिखाये, वह अहंकार किस काम का? 'ज्ञेय' खुद ज्ञाता नहीं हो जाए वही जागृति, वही अदीठ तप। अहंकार का रस पिघला देने के लिए जो जागृति रखनी पड़े, वही अदीठ तप।

अंतराय जैसे बाहर से आयें वैसे अंदर से भी आयें। अहंकार अंतराय रूप है। उसके सामने तो सही तरह तैयार हो जाना होगा।

कोई मान दे तो भी सहन हो सके ऐसा नहीं है। जिसे अपमान सहन करना आया वही मान सहन कर पाये। किसी ने दादाजी से कहा, 'लोग आपको फूल चढ़ाते हैं उसे आप क्यों स्वीकार करते हैं?' तब दादाजी ने कहा, 'अगर तुझे चढायें पर तु सहन नहीं कर पायेगा।' लोग तो इस मालाओं का गंज देखकर दंग रह जायेंगे। अगर किसी को पैर छूकर नमस्कार करोगे तो तुरंत ही वह खड़ा हो जायेगा।

मान और अपमान की ही गरज़ है न, हर जगह?

प्रश्नकर्ता : किन्तु दादाजी, यह ऐसा आगे से चला आता होगा क्या?

दादाश्री : अनादिकाल का सारा यही का यही माल। मनुष्य में आया तब से मान और अपमान। वरना अन्य योनि में ऐसा कुछ भी नहीं। यह मान-अपमान तो मनुष्यों में और देव योनि में ही बहुत है।

अपनी बात का रक्षण, सब से बड़ी हिंसा

प्रश्नकर्ता : आपने कहा था कि जो वाणी है वह अहंकार से निकलती है?

दादाश्री : वाणी बोलने में हर्ज नहीं है, पर 'हम सही है' ऐसा उसका रक्षण नहीं होना चाहिए। खुद की बात का रक्षण करना वही सब से बड़ी हिंसा है। खुद की बात ही सही है ऐसा समझाने जाए वही हिंसा।

वाणी से ही यह सारा जगत् खड़ा रहा है। यदि वाणी नहीं होती तो यह जगत् ऐसा नहीं होता। यानी वाणी ही मुख्य आधार है।

प्रश्नकर्ता : रक्षण नहीं करना मतलब, हम सही है ऐसी भावना नहीं होनी चाहिए, ऐसा?

दादाश्री : हम सही है, इसीका नाम ही रक्षण कहलाये। रक्षण नहीं रहा तो कुछ हर्ज नहीं है। सारे गोले फूट जाएं और किसी को ज्यादा लगे भी नहीं। अहंकार का रक्षण करते हैं इसलिए बहुत चुभता है।

मैं छोटे बच्चे को पीटूँ तो उसे कुछ नहीं होगा और यदि आप चिढ़कर हलकी चपत भी लगायेंगे तो भी कुहराम मचा देगा। यानी उसे मार पड़ी उसका दुःख नहीं है, अहंकार घायल हुआ इसका दुःख है।

पहचानो इस अहंकार को

शास्त्रकारों ने क्या कहा है कि अहंकार एक ऐसा गुण है, जो प्रत्येक मनुष्य को निरा अँधा बनाता है। भाईयों में भी दुश्मनी हो जाए। सगा भाई कब पायमाल हो जाए, ऐसा सोचे। अरे! सगे बाप का भी ऐसा ही, बेटा पायमाल हो ऐसा आशीर्वाद देगा। अहंकार को पहचान लेना चाहिए कि वह हमारा क्या लगता है?

प्रश्नकर्ता : मगर हमारा काम निकालने के लिए हमें अहंकार तो चाहिए ही न?

दादाश्री : ऐसा काम निकालने का अहंकार होता ही है। उसका कौन मना करता है? किन्तु इस अहंकार को पहचानना चाहिए कि अहंकार में ऐसे गुण हैं। ताकि हमें उस पर प्रेम नहीं रहे, आसक्ति नहीं रहे।

नहीं शोभित पगला अहंकार कभी

जिसका लोग स्वीकार नहीं करे और अहंकार खुद 'मैं भी कुछ हूँ' ऐसा मानकर बैठा हो, वह पगला अहंकार कहलाये, बदसूरत अहंकार कहलाये। चक्रवर्ती को भी अहंकार होता है मगर वह जैसे मोड़ना चाहे वैसे मोड़ सके, ऐसा होता है। लोग उस अहंकार को मान्य करें, वह सयाना अहंकार कहलाये और यह तो निरा पागल ही। उस पागल अहंकार से हम पूछे कि, आप कौन से कोने में शांति से सोये रहते थे? दुनिया में ऐसा कौन है जो आपसे कहे कि, 'आइये, आइये, आपके बिना तो हमें कुछ भाता नहीं है।' जबकि लोग तो कहें कि, 'आपके आने से पहले यहाँ उजाला था, जो आपके आते ही अँधेरा हो गया', ऐसे अपमान मिले हैं। जिस अहंकार की वजह से अपमान हुए हैं, ऐसे अहंकार को क्या सिर पे चढ़ाना है? ऐसा बदसूरत अहंकार, इसका रक्षण क्या करना? उसका पक्ष क्या लेना?

अहंकार तो खूबसूरत होना चाहिए, लोगों को पसंद आये ऐसा होना चाहिए, जैसा मोड़ना चाहें वैसे मुड़ जाए, ऐसा। इस अहंकार से पूछे कि, 'अपना बहीखाता दिखाइये, आपको कहाँ सम्मान मिला? कहाँ-कहाँ अपमान मिला? कैसे-कैसे सुख दिये लोगों को? लोगों में आपकी कहाँ-कहाँ क़ीमत थी?' अगर देखने जाएं तो भाई के पास, बाप के पास चवन्नी की भी क़ीमत नहीं होती! किसी के दिल में आपका स्थान नहीं है। अगर चार लोगों के दिल में जगह बनाई हो तो भी अच्छा कहलाये। ऐसा अहंकार पागल नहीं कहलाता, खूबसूरत कहलाये। पर यह तो जहाँ कहीं जाए प्रत्येक मनुष्य मन में सोचे कि 'यह यहाँ से जाए तो अच्छा' वही बदसूरत अहंकार। कोई मुँह पर स्पष्ट नहीं कहता, मन में कहे कि, 'हमें क्या? अपने पापों से ही मरेगा।' सभी अपने फ़ायदे की सोचें। सब अवसरवादी ही होते हैं सिर्फ एक 'ज्ञानी पुरुष' मुँह पर स्पष्ट बोल देनेवाले होते हैं।

यह अहंकार खुद की पोझिशन (स्थान) बिगड़ जाती हो तो साथ चलने को तैयार नहीं होता, कि 'मेरी क़ीमत क्या उसमें?' यह तो सनकी अहंकार कहलाये। (ज्ञान से पहले) हमारा भी अहंकार था, लेकिन वह सयाना अहंकार था। कई लोगों के हृदय में मेरी जगह थी और हमारे घर के पास चार गाडियाँ तो खड़ी रहा करती थी (इतने सारे लोग सलाह-मसबरा लेने आते), फिर भी हमें वह अहंकार चुभता था कि, 'यह अहंकार जाए तो हमें सारी दुनिया का राज्य मिले।' अहंकार तो खूबसूरत होना चाहिए। देह खूबसूरत हो और अहंकार बदसूरत हो तो किस काम का? देह बदसूरत हो तो चला लें लेकिन अहंकार बदसूरत नहीं चाहिए। कई तो सूरत से बिलकुल बदसूरत दिखाई दें, मगर अहंकार ऐसा खूबसूरत लाये होते हैं कि लोग, 'आइये साहब, आइये साहब' कहें।

यह अहंकार किसके लिए? उसे जिन्दा ही कैसे रखा जाए? जिसने अनंत अवतार से परेशानी में रखा है, वह तो हमारा पक्का शत्रु है। सारी दुनिया का साम्राज्य छोड़कर, 'यह हमारा, यह तुम्हारा' यह किसके खातिर?

यह अहंकार तो पगली वस्तु कहलाये। वह रास्ते पर पड़ी मिले तो भी नहीं लेनी चाहिए। आत्मा में ही रहना, आत्मा होकर ही रहना और पगला अहंकार खड़ा हो जाए तो उसे तमाचा मारकर निकाल देना।

नीलकंठ होने ज़हर तो पीना ही पड़ेगा

सारे जगत् में जिस-जिस ने ज़हर के प्याले (अपमान के प्याले) दिये उन्हे हम हँसते मुँह से पी गये और ऊपर से आशीर्वाद देकर महादेवजी हुए।

ज़हर तो आपको पीना ही पड़ेगा। अगर आपका हिसाब है तो प्याला सामने आयेगा ही। फिर आप हँसते-हँसते पीयें या मुँह बिगाडकर पीयें, पीना तो पड़ेगा ही। अरे! आप लाख पीना नहीं चाहें, फिर भी लोग जबरदस्ती आपको पिलायेंगे। इसके बजाय हँसते-हँसते पीकर ऊपर से आशीर्वाद देकर क्यों नहीं पीता? इसके बगैर नीलकंठ कैसे हो सकते हैं? ये जो प्याले दे जाते हैं वे तो आपको ऊँचा पद देने आते हैं। वहाँ पर यदि मुँह बिगाडेंगे तो वह पद दूर चला जायेगा।

'मैं चन्दुलाल हूँ' वहाँ तक यह अपमान सब कड़वा लगे, मगर हमारे (ज्ञान पाये महात्माओं के) लिए तो यह सब अमृत समान हो गया है। मान-अपमान, कड़वा-मीठा वे सारे द्वन्द्व हैं। ये सब हम सबके लिए अब नहीं रहे, हम द्वन्द्वातीत हैं। इसके लिए तो यह सत्संग किया करते हैं। आखिर में सभी को द्वन्द्वातीत दशा ही प्राप्त करनी है न!

यदि सामनेवाला कड़वा पिलाये और आप हँसते मुँह, आशीर्वाद देकर पी जाएं तो एक ओर आपका अहंकार धूल जाए और आप उतने मुक्त होते हैं और दूसरी तरफ कड़वा पिलानेवाले को भी रीएक्शन आयेगा और उसमें भी परिवर्तन आ जायेगा। उसका भी भला होगा। वह भी समझ जायेगा कि मैं कड़वा पिलाता हूँ वह मेरी कमज़ोरी है और यह हँसते मुँह पी जाता है वह बड़ा शक्तिमान है।

यदि कड़वा पीना हो तो हम खुद थोड़े ही पीनेवाले हैं? यह तो सामने से कड़वा पिलाये वह कितना उपकारी? परोसनेवाला तो माँ जैसा कहलाये। और कड़वा पीये बगैर कोई चारा भी नहीं है। नीलकंठ होने कड़वा पीना पड़ेगा।

पहचानो ज़हर पीनेवाले को-पीलानेवालों को

'हम' तो 'चन्दुभाई' से बोल दें कि तुझे सौ बार यह कड़वा पीना पड़ेगा। बस, फिर उसको (चन्दुभाई को) अभ्यास हो जायेगा। बालक को कड़वी दवाई जबरदस्ती पिलानी पड़े। लेकिन यदि वह समझ जाए तो फिर जबरदस्ती नहीं पिलानी पड़े। अपने आप ही पी ले। एक बार तय किया कि कोई भी जो कुछ कड़वा पिलाये वह सब पी लेना है तब फिर पीया जाए। मीठा तो पीया ही जाता है लेकिन कड़वा पीना आना चाहिए। आज नहीं तो कल पीना तो पड़ेगा ही न? यह तो ऊपर से मुनाफ़ा है, इसलिए पीने की प्रेक्टिस डालनी चाहिए।

यदि सब लोगों के बिच नीचा दिखाये तो घाटा महसूस हो, पर उसमें तो भारी मुनाफ़ा है, यह समझ में आ जाने के बाद घाटा महसूस नहीं होता।

'मैं शुद्धात्मा हूँ' बोलते तो हैं, फिर उसी पद में ही रहना है न? उसके लिए तो अहंकार खाली करना होगा। पक्का निश्चय करने पर वह खाली होगा ही।

गंगू तैली को यदि राजा बना दिया जाए और गद्दी पर बैठकर कहे कि 'मैं गंगू तैली हूँ' तो कैसा लगे? वैसे ही, 'शुद्धात्मा' की गद्दी प्राप्त होने के बाद हमें और कुछ नहीं होना चाहिए।

बनाईये अहंकार को निरस

कड़वे-मीठे अहंकार के पद में से आपको खिसकना (हटना) है न? फिर उसमें पैर क्यों रखते हैं? तय करने के बाद दोनों ओर पैर रख सकते हैं क्या? नहीं रख सकते। रूठना कब होता है? जब किसी ने कड़वा परोसा हो तब। हम विधि करते समय बोलते हैं कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' तो फिर शुद्धात्मा का रक्षण करना चाहिए या अहंकार का? अहंकार को खुद निरस करना बड़ा कठिन कार्य है। इसलिये यदि कोई निरस कर देता है तो बहुत अच्छा है। उससे अहंकार नाटकीय रहे और भीतर का सुचारु रूप से चलता रहे। यदि यह इतना मुनाफेवाला है तो अहंकार को निरस करने के लिए हँसते मुँह ही क्यों नहीं पीना? अहंकार संपूर्ण रूप से निरस हुआ कि आत्मा पूर्ण। इतना तय

कीजिये कि अहंकार निरस करना ही है, फिर वह निरस हुआ ही करेगा।

यदि कड़वी दवा रास आ गई तो और कोई झमेला ही नहीं रहता। और अब आप जान गये हैं कि इसमें मुनाफा है। जितना मीठा लगता है उतना ही कड़वा भरा पड़ा है, इसलिए पहले कड़वा पचा जाएं, फिर मीठा तो सहज ही निकलेगा। उसे पचाना बहुत भारी नहीं पड़ेगा। यह कड़वी दवाई पच गई तो बहुत हो गया। फूल लेते (स्वीकारते) समय हरकोई हँसता है पर ढ़ेले बरसे तब?

भूल से छूटने के लिए वातचीत का प्रयोग

मोक्ष में जाने का प्लानिंग बड़ा है। मेरी उपस्थिति में ज्ञान में प्रगति नहीं करनी है? ऐसा कहते ही फाइल नंबर एक के साथ बातें शुरू हो जाए।

मैं 'ए. एम. पटेल' के साथ बहुत बातें किया करता था। मुझे मज़ा आये ऐसी बातें किया करता था। हम भी इतने बड़े छहत्तर साल के अंबालालभाई से ऐसा कहें कि 'छहत्तर साल से थोड़े भी सयाने हुए हैं? वह तो गढ़ने-पीटने पर सयाने हुए हैं।'

प्रश्नकर्ता : आपने कब से बातें शुरू की?

दादाश्री : ज्ञान होने के बाद। पहले तो मैं कैसे बात करता? 'मैं अलग हूँ' ऐसा भान हुआ उसके बाद से बातें शुरू की।

जब ब्याहने बैठे थे, वह भी याद करके अंबालाल से कहें कि, 'अहह! आप तो ब्याहने बैठे थे न? फिर सिर से पग़डी खिसक गयी थी, तब फिर रँडुआ होने का विचार आया था आपको।' ऐसा भी कहता मैं। दिखाई दे सब, कैसे पगड़ी खिसक गई थी? और ब्याहते समय मंडप कैसा था? सब दिखाई दे। विचार करते ही नज़र आये। हम बोलें और हमें आनंद आये। ऐसे बात करें ताकि वे (अंबालाल) खुश हो जाएं।

न रक्षा भूलों को ज्ञानी ने

दूसरा, हमने हमारी भूलों का रक्षण नहीं किया था। भूल हो गई होती, किन्तु उसका आयुष्य कैसे बढ़ता है वह मैं जानता था, इसलिए क्या करता? सब बैठे हों और कोई एक आदमी आया और कहे, 'बड़े ज्ञानी होकर बैठे हो, यह भूल तो नीकलती नहीं है।' ऐसा बोले न, तब मैं कहूँ कि, 'भैया, यह इतनी खुली कमज़ोरी है यह मुझे मालूम है। आपको आज पता चला, मुझे तो पहले से पता है।' मैं यदि ऐसा कहूँ कि, 'हम ज्ञानीओं को कुछ नहीं छूता।' यानी वह भूल अंदर समझ जाए कि, 'यहाँ बीस साल का हमारा आयुष्य बढ़ गया।' क्योंकि मालिक अच्छे हैं, कैसा भी करके हमारा रक्षण करते हैं। मैं कुछ ऐसा कच्चा नहीं हूँ। रक्षण कभी भी नहीं किया है। लोग रक्षण करें कि नहीं करते?

एक साहब चुटकी में लेकर नसवार सूंघ रहे थे। मैंने पूछा, 'साहब, यह नसवार क्या ज़रूरी है आपके लिए?' तब वे कहते हैं, 'नसवार में तो कोई हर्ज नहीं न?' मैंने कहा, 'साहब को मालूम नहीं है कि वे नसवार का अंदर से आयुष्य बढ़ा रहे हैं।' क्योंकि आयुष्य माने क्या? कोई भी संयोग जो है उसका वियोग तय होने के बाद ही दूसरा संयोग आ मिलता है। यह तो वियोग तय हुआ हो, उसका ऐसे समर्थन करके आयुष्य बढ़ाते हैं। क्योंकि जीवित मनुष्य इस तरह चाहे उतनी घट-बढ़ करा सकता है, इसलिए क्या किया जाए फिर? ये सभी आयुष्य बढ़ाया करते हैं। हर मामले में उसका रक्षण करते हैं कि, 'कोई हर्ज नहीं, हमें तो छूता तक नहीं।' गलत वस्तु का रक्षण करना यह तो भयंकर गुनाह है।

भागे भूल जब भूल को पहचाने भूल

जिसने एकबार तय किया कि मेरे में जो भूलें शेष हैं उसे मिटा देनी है, वह परमात्मा हो सकता है। हम अपनी भूलों से बंधे हैं। भूलें मिटाने पर तो परमात्मा ही हैं। जिसकी एक भी भूल नहीं है, वह

खुद ही परमात्मा है। यह भूल क्या कहती है? 'तू मुझे समझ, मुझे पहचान'। यह तो ऐसा है कि भूल को अपना सद्‌गुण मानते थे। अब भूल का स्वभाव कैसा है कि वह हम पर सत्ता चलाये। लेकिन भूल को भूल समझें तो वह भागे। फिर खड़ी नहीं रहे, चलती बने। मगर हम क्या करते हैं कि भूल को भूल नहीं समझते और ऊपर से उसकी तरफ़दारी करते हैं। ऐसे भूल को घर में ही भोजन कराते हैं।

किसी को हम से किंचित्‌मात्र दु:ख होने पर समझना कि हमारी भूल है। हमारे अंदर परिणाम ऊपर-नीचे होने पर भूल हमारी है, यह समझ सकें। सामनेवाला व्यक्ति भुगत रहा है, इसलिए उसकी भूल तो प्रत्यक्ष है किन्तु हम निमित्त हुए, हमने उसे झिड़काया इसलिए हमारी भी भूल। दादाजी को क्यों भुगतना नहीं पड़ता? क्योंकि उनकी एक भी भूल शेष नहीं रही। हमारी भूल से सामनेवाले को कुछ भी असर होता है, जो कुछ भी उधार हो गया तो तुरंत मन से माफ़ी माँगकर जमा कर लेना।

बुद्धि की वकालत, दोषों की जीत

(ज्ञान मिलने के बाद) जागृत हुए इसलिए मालूम हो कि यहाँ भूल होती है, ऐसे भूल होती है। वर्ना खुद को अपनी एक भूल मिले नहीं। दो-चार बड़ी भूलें हों वे दिखाई दें। उसे खुद को दिखाई दे उतनी ही। कभी-कभी बोले भी कि ज़रा-सा क्रोध सही और थोड़ा लोभ भी सही, ऐसा बोले मगर हम कहें कि 'आप क्रोधी हैं' कि तुरंत अपने क्रोध का रक्षण करे, बचाव करे, वकालत करे। हमारा क्रोध वह क्रोध नहीं कहलाये, ऐसी वकालत करे और जिस किसी की भी वकालत की जाए वह सदा आपके पर सवार हो जाए।

जगत् के सभी लोगों को क्रोध-मान-माया-लोभ निकालने हैं। निकालने की इच्छा किसे नहीं होती? वे बैरी ही हैं, ऐसा सब जानते हें फिर भी रोज़ाना भोजन कराते हैं और बड़ा करते हैं। अपनी भूल ही दिखाई नहीं देती, फिर लोग भूलों को खुराक दिया ही करे न!

कषाय भागें उनकी खुराक बंद होते

कुछ मनुष्य जागृत होते हैं, वे बोलते हैं सही कि यह क्रोध होता है वह पसंद नहीं है, पसंद नहीं है, फिर भी करना पड़ता है। कुछ तो क्रोध करते हैं और कहते हैं, 'क्रोध नहीं करें तो हमारी गाड़ी चलती ही नहीं, हमारी गाड़ी बंद हो जाए' ऐसा भी कहें।

क्रोध-मान-माया-लोभ निरंतर खुद का ही चुराकर खाते हैं, पर लोगों की समझ में नहीं आता है। इन चारों को यदि तीन साल भूखें रखो तो वे भाग जाएं। मगर वे जिस खुराक से जी रहे हैं वह खुराक क्या है? यह यदि नहीं जानते तो उन्हें भूखों कैसे मारें? यह समझ नहीं होने के कारण उसे खुराक मिलती ही रहती है। वे कैसे जीते हैं? और फिर वे अनादि काल से जी रहे हैं। इसलिए उनकी खुराक बंद कर दीजिये। ऐसा विचार तो किसी को आता नहीं है और सब मार-पीटकर उसे निकालने की मेहनत में लगे हैं। वे चारों तो वैसे जाए ऐसे नहीं हैं। वह तो आत्मा बाहर निकले (मृत्यु के समय) यानी भीतर से ये सब झाड-बटोरकर साफ करने के बाद में निकले। उन्हें हिंसक मार नहीं चाहिए, उन्हें तो अहिंसक मार चाहिए।

आचार्य शिष्य को कब झिड़कायें? क्रोध होने पर। उस समय कोई कहे, 'महाराज, इसे किस लिए झिड़काते हैं?' तब महाराज कहे, 'उसे तो झिड़काने जैसा ही है।' बस खतम, ऐसा बोले वह क्रोध की खुराक। किये गये क्रोध का रक्षण करना वही उसकी खुराक।

कोई कंजूस स्वभाववाला आपको चाय की पुड़िका लाने को कहे और आप तीस रूपये की लायें तो वह कहे कि, 'इतनी महँगी तो कोई लाता है कहीं?' ऐसा बोलने पर लोभ को पोषण मिले और कोई अस्सी रूपये की पुड़िया लाया तो उडाऊ मनुष्य

कहे कि, 'यह अच्छी हैं।' तो वहाँ पर भी उडाऊपन के लोभ को पोषण मिले। यह हुई लोभ की खुराक। हमें नॉर्मल रहना है।

अब कपट क्या खाता होगा? रोज़ाना कालाबाज़ारी करता हो पर कपट की बात निकले तब बोल उठे कि, 'ऐसा कालाबाज़ार हम नहीं करते।' ऐसा वह ऊपर से शाहुकारी दिखलाये, वही कपट की खुराक।

और मान की खुराक क्या? नगीनदास सामने से आ रहे हो और हम कहें, 'आइये नगीनदास जी', तब नगीनदास का सीना अक्कड हो जाए और खुश हो जाए, वह मान की खुराक।

आत्मा के अलावा सभी खुराक से जीते हैं।

हम तो इन क्रोध-मान-माया-लोभ से, चारों से कहें कि, 'आइये, बैठिये' पर उन्हें खुराक नहीं दे (रक्षण नहीं करें)।

लोभ का रक्षक कपट, मान का रक्षक क्रोध

क्रोध-मान-माया-लोभ में लोभ का तांता भारी होता है। लोभ यानी कुछ इच्छा रखना वह। लोभी को कोई धमकाये तो वह हँसेगा। ज्ञानी भी हँसे, पर लोभी लोभ की गाँठ ज्यादा बड़ी करके हँसे।

जब कि मानी को कोई धमकाये तो वह हँसेगा नहीं। तुरंत ही उसका क्रोध भड़क उठेगा, पर लोभी को क्रोध नहीं आता।

भगवान ने कहा, कि क्रोध और मान को लेकर ही लोग दु:खी हैं। मान को लेकर तिरस्कार होता है। मान प्रकट तिरस्कार करता है। क्रोध जले और जलाये। भगवान के वाक्यों को सुनकर लोग उसका उपाय करने निकले। क्रोध नहीं करना चाहिए, मान नहीं करना चाहिए। इसलिए त्रियोग साधना करने लगे। त्रियोग साधना से क्रोध-मान कुछ कम हुए और बुद्धि का प्रकाश बढ़ा। बुद्धि का प्रकाश बढ़ने से लोभ का रक्षण करने कपट बढ़ाया। क्रोध और मान भोले होते हैं। कोई न कोई दिखानेवाला मिल जाता है। जब कि यह लोभ और कपट तो ऐसे हैं कि खुद मालिक को ही पता नहीं चलता। वे तो घुसने के बाद निकलने का नाम तक नहीं लेते।

लोभी कब क्रोध करे? आखिर में अंतिम घडी में जब सब से बड़े लोभ की हानि होती हो और कपट भी काम में नहीं आता हो तब वह क्रोध का सहारा लेगा।

जन्मा तब से ही लोभी की लोभ की डोर टूटती ही नहीं। क्षणभर के लिए भी उसका लोभ नहीं हटता। उसकी जागृति निरंतर लोभ में ही होती है। मानी तो बाहर निकलने पर मान और मान में ही रहे, रास्ते पर भी जहाँ जाए वहाँ मान में ही और वापस लौटने पर भी मान में ही। पर यदि कोई अपमान करे तो तब वह क्रोध करे।

मोक्ष में जाने में कौन भटकाता है? क्रोध-मान-माया-लोभ। लोभ का रक्षण करने हेतु कपट है, इसलिए कपड़ा बेचते समय अंगुलभर काट ले। मान का रक्षण करने क्रोध है। इन चारों के आधार पर लोग जी रहे हैं।

क्रोध-मान की तुलना में कपट और लोभ की गाँठें भारी होती है। वे जल्दी नहीं छूटती। लोभ को गुनहगार क्यों कहा? लोभ किया मतलब दूसरों का लूट लेने का विचार किया इसलिए। एक ही मनुष्य अपने घर के पानी के सारे नल खोल दे तो दूसरों को पानी मिलेगा क्या?

रक्षण करने से बिगड़े अनंत जन्म

ज्ञानी पुरुष आपकी भूल के लिए क्या कर सकें? वे तो केवल आपकी भूल दिखलायें, प्रकाश करें, रास्ता दिखलायें कि आप भूलों की तरफ़दारी मत करना। किन्तु फिर यदि भूलों की तरफ़दारी करें कि, 'हमें तो इस दुनिया में रहना है, इसलिए ऐसा कैसे कर सकते हैं?' अरे! ऐसे भूल को पोसकर, तरफ़दारी

मत करना। एक तो भूल करे और ऊपर से कल्पांत करें, इसलिए कल्प के (कालचक्र के) अंत तक रहना पड़ेगा।

भूल को पहचान ने लगा तब से भूल मिटने लगे। कुछ व्यापारी कपड़ा खींच-खींचकर नापते हैं और ऊपर से बड़ाई करें कि आज तो पाव गज़ कपड़ा कम दीया। ये तो इतना बड़ा रौद्रध्यान और ऊपर से उसकी तरफ़दारी? भूल की तरफ़दारी नहीं करनी चाहिए। घी का व्यापारी घी में किसी को मालूम तक न हो ऐसे मिलावट कर के पांच सौ रुपये कमा लेता है, वह तो जड़ समेत वृक्ष बो देता है। खुद के अनंत अवतार खुद ही बिगाड़ देता है।

तरफ़दारी से रहे प्रकृति-अहंकार

(आत्मज्ञान प्राप्ति के पश्चात्, अहंकार फ्रेक्चर (भग्न) होता है और आत्मा अलग अनुभूति में आता है और देहाध्यास छूट जाता है। आत्मा (रिअल-खुद), अहंकार (मान्यताएँ) और देह (नामधारी) की अलगता अनुभव में आती है।) दादाश्री इस त्रिपुटी को समझाने 'मैं, बाबा, मंगलदास' का प्रयोग किया करते थे। इनमें मैं = आत्मा, बाबा = अहंकार और मंगलदास = देहधारी चन्दुभाई समझना हैं।)

यदि हम मंगलदास की तरफ़दारी करें तो हम बाबा (अहंकार) ही रहेंगे और बाबा (अहंकार) की तरफ़दारी करें तो हम फिर से मंगलदास ही हो जायेंगे। उनको उनके हिसाब के अनुसार मिलता रहेगा, हम उसे देखा करें। क्या होता है उसे देखा करें यही हमारा मार्ग।

यह भाई कहता है, 'हमारे दोष क्यों नहीं दिखलाते?' मैंने कहा, 'देखने में आये तो दिखलायें न? हमारे नजर में आये तो वह फाइल निकालें। नजर में नहीं आती इसलिए मैंने समझा कि आपने दोष निकाल दिये होंगे। बाद में वह जब नजर में आयेंगे तब फिर दिखा देंगे।'

जब खुद की भूल खुद को दिखाई देगी, तब डिसीझन (निर्णय) आ गया समझना। अब बाबा (अहंकार) ज्यादा समय रहनेवाला नहीं। अब वह धीरे धीरे पीघलते भगवानस्वरूप होता जायेगा। खुद की भूल देखे तब से भगवान होने की तैयारी होती है।

किसी ने गाड़ी से उतार दिया, तब खुद पर क्या असर होता है, वह देख लेना।

प्रश्नकर्ता : सही बात है दादाजी, सामनेवाले की पोझिशन में आ जाना तुरंत।

दादाश्री : हाँ, सामनेवाले के साथ भूल हो गई हो तो उसे सुधार लेना। फिर वह अपने आप उलझन में पड़े, उसकी जिम्मेदारी हमारी नहीं है। हमारे कारण उलझन में पड़े तो हमारी जिम्मेदारी। कुछ भूलें नहीं दिखला सकते। मेरा तो नियम है कि पहले पूछ लूँ कि, 'तुम्हें भूलें बताऊँगा तो तुम्हें बुखार नहीं हो जायेगा न? तब कहे,' नहीं दादाजी, वह तो आपसे ही जानना है, तब फिर मैं दिखला दूँ। अब बुखार ही कहाँ चढ़नेवाला है? बाबा (अहंकार) ही मिट जाना है जहाँ। जब तक अहंकार हो तब तक भूल होना संभव है।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, आप मुझे भी बतलाना, क्योंकि पुद्गल में अभी ऐसी कुछ स्थूल कमी हो वह देख सकें लेकिन सूक्ष्म में कुछ रहा होगा तो मालूम नहीं पड़ता।

दादाश्री : ठीक है। कई दोष दिखाई देने लगे हैं। किन्तु अभी भीतर कुछ-कुछ पड़े हैं। वे फिर हम बता देते हैं। हमें तो किसी न किसी तरह बाबापन (अहंकार को) खतम करना है। बाबापन छूट जाना चाहिए। अनंत अवतार से यह धंधा लेकर बैठे थे। अब किसी भी रास्ते से छूटना ही है, यही हम सबका दृढ निश्चय है।

मैं बगैर भूल का हुआ इसलिए दूसरों को भूल दिखला सकता हूँ। आपको अपनी भूल खोजने में

अभी देर लगेगी। खुद करे और खुद जाने वह मुश्किल है। मैंने ज्ञान दिया इसलिए जानने लगे कि खुद कौन है? बाबा तो उसे जाने ही नहीं न? आप 'मैं' (आत्मा) इसलिए बाबा (अहंकार) की सारी भूलें देख सकते हैं लेकिन अभी भी कुछ समय के लिए बाबा बन जाते हैं न!

आज्ञा चूकने पर अहंकार हो जाये जीवित

प्रश्नकर्ता : कोई मुझ से कहे कि तुम ऐसे हो, वैसे हो, पागल हो, ऐसा कहे तो उसकी तरफ़दारी नहीं करना, रक्षण नहीं करना। कह देना कि हम तो पहले से ही ऐसे हैं। तरफ़दारी की या तो रक्षण किया तो निर्जीव अहंकार है वह जीवित हो जाता है, क्या यह बात सही है?

दादाश्री : वह जीवित नहीं हो जाता मगर तरफ़दारी की इसलिए हमें झंझट ज्यादा करनी पड़े (कर्मो के निकाल के लिए ज्यादा पुरुषार्थ करना पड़े)। थोड़ी देर के लिए तरफ़दारी की तो सारी रात में कटेगी। अगर उनसे कहें कि आप जैसा कहें वैसा, तो निपटारा हो गया। हम उनके साथ प्लस-माइनस करने जाएँ तो सारी रात झंझट से निपटारा नहीं होगा। इसलिए आप कहते हैं वैसे ही हैं हम, ऐसे बात स्वीकार लें तो फाइल का कुछ तो निपटारा हो गया।

प्रश्नकर्ता : निपटारा हो गया, बाद में?

दादाश्री : फिर हमें क्या?

प्रश्नकर्ता : 'आप कहते हैं वैसे हैं' कहकर उनसे हमने हार कबूल कर ली उसका क्या?

दादाश्री : जिसने हार कबूल कर ली फिर उसके लिए करने को क्या रहा? यह तो हमने अपनी रीति दिखला दी, हम जिस रीति से चले वह (ज्ञान की) रीति।

और यदि पाँच आज्ञा चूके तो अहंकार सजीव होना शुरू। यदि अहंकार सजीव होने लगा तो पहले जहाँ मूल था वहाँ आकर खड़ा रह जायेगा। आप यदि आज्ञा चूकें तो सजीव भी हो जाए, देर नहीं लगती सजीव होने में। कई लोगों को फिर से सजीव हो भी गया है न? आज्ञा चूके, पाँच आज्ञा छोड़ दी मतलब सब सजीव हो जाए। जिन्हों ने छोड़ दी है, उन्हें सजीव हो भी गया है। पाँच आज्ञा नहीं रही तो कुसंग आपको खा जायेगा। यहाँ चहूँओर कुसंग ही है, वह आपके अहंकार की निर्जीवता सारी की सारी खा जायेगा।

प्रकृति को माफ़ करो किन्तु साथ नहीं दो

प्रश्नकर्ता : आपके सत्संग में आपने कहा था कि 'खुद की प्रकृति को माफ़ किया जाए, लेकिन प्रकृति की तरफ़दारी नहीं की जाए, उसका बचाव नहीं किया जाए।' ज़रा इसका भेद सदृष्टांत बताइये।

दादाश्री : तरफ़दारी करें और बचाव करें तो हमने प्रकृति का साथ दिया कहलाये, मतलब 'पर' के मालिक हुए। प्रकृति ने उलटा किया हो तो उसे माफ़ कर सकते हैं। क्योंकि हम खुद (आत्मा स्वरूप) में रहकर माफ़ कर सकते हैं और तरफ़दारी या बचाव तो 'पर' में आकर करना पड़ता है। प्रकृति के मालिक हो जाते हैं। चाहे कैसा भी गुनाह किया हो तो उसे माफ़ कर सकते हैं। माफ़ करने में खुद दूर रहकर माफ़ कर सकते हैं और वह बचाव करें यानी मालिक होकर ही करें। तरफ़दारी करें वह भी मालिक होकर ही करें। उसके पक्ष में हो गये। और माफ़ करनेवाला पक्षकार नहीं कहलाता। माफ़ करना तो खुद (आत्मा) का स्वभाव ही है।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति को खुद के स्वभाव में रह कर माफ़ कर सकते हैं, उसमें 'स्वभाव में रहकर' इसका क्या मतलब?

दादाश्री : प्रकृति कैसी भी गलत हो, तो उसे माफ़ करने के अलावा और कोई अच्छा रास्ता नहीं है। सभी रास्ते तन्मयाकार करानेवाले हैं, इसलिए माफ़ कर सकें तो ही उससे अलग रहे। प्रकृति बुरी हो और

उसका बचाव किया मतलब उसके पक्ष में बैठे। तरफ़दारी करने पर प्रकृति बढ़ जायेगी। प्रकृति रास आ गई उसे राग कहलाये। तरफ़दारी की, मतलब प्रकृति के ऊपर राग। बचाव करना वह भी राग हुआ।

प्रश्नकर्ता : यह प्रकृति को ही माफ़ करना, मतलब क्या?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करनेवाला करता है न? मतलब जो दोष हुआ है उसकी माफ़ी माँगता है। प्रतिक्रमण करनेवाली प्रकृति है और माफ़ करनेवाले भगवान हैं। यानी माफ़ी माँगनेवाला अलग है और माफ़ करनेवाला अलग है। उन दोनों के बिच दूसरा संबंध नहीं है। और बचाने में (प्रकृति का रक्षण करने में) तो बहुत बड़ा संबंध, बड़ा जबरदस्त संबंध रहा तो बचाना होता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, बिना राग के बचाते नहीं।

दादाश्री : उसे राग कहें या और कुछ कहें पर सब से बड़ा संबंध वह 'पर' का मालिक रहा तो बचाव करेगा ही। बचाव के लिए और कोई शब्द नहीं रहा न?

प्रश्नकर्ता : मतलब प्रकृति का पोषण नहीं करना, उसका रक्षण नहीं करना?

दादाश्री : हाँ, रक्षण नहीं करना, उसका क्या मतलब कि आत्मा होने के बाद प्रकृति की तरफ़दारी करें तो वह गलत कहलाये। विशेष तरफ़दारी करें मतलब फिर उसके पक्ष के ही हो गये। प्रकृति का बचाव करके, उसकी तरफ़दारी करने की वज़ह से यह मुसीबत खड़ी हुई है और प्रतिक्रमण से धूल जाता है।

प्रश्नकर्ता : आपने हमें उसे धोने की दृष्टि प्रदान की फिर भी प्रकृति की तरफ़दारी हमसे क्यों की जाती है?

दादाश्री : वह तो अभी प्रकृति के पक्षकार हो इसलिए ही। हम प्रकृति की तरफ़दारी नहीं करते। जहाँ कहीं प्रकृति का दोष दिखाई दिया कि तुरंत माफ़ कैसे किया जाए, उसके लिए तैयारी होती है। अभी भी तरफ़दारी हो जाती है न, वह तो भयंकर गुनाह है। उसे नज़रअंदाज करे न, तो भी तरफ़दारी की कहलाये, वह भी गुनाह है। आप कहें कि, 'दादाजी यह गलत है', तो मुझे कह देना चाहिए कि, 'हाँ भैया, गलत है।' मैं बचाव करने के लिए दूसरे शब्दों का प्रयोग करूँ, वकालत करूँ तो वह गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : नज़रअंदाज करना वह कमज़ोरी है?

दादाश्री : वह गुनाह ही कहलाये।

प्रश्नकर्ता : और दादाजी, दूसरों की प्रकृति को माफ़ कर सकते हैं, मगर खुद की प्रकृति को भी माफ़ कर सकें?

दादाश्री : हाँ, उसे कर सकें न! माफ़ करना ही चाहिए। माफ़ नहीं करने पर और कोई दूसरा रास्ता नहीं है जो इतना सरल हो।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, किन्तु वह माफ़ी यानी वह एक तरह का जजमैन्ट हुआ न?

दादाश्री : हाँ, उसे जजमैन्ट कहें या और जो ठीक लगे कहें। प्रकृति के आधार पर जजमैन्ट, लेकिन यहाँ ज्ञान में जजमैन्ट नहीं होता। जजमैन्ट तो वहाँ, जहाँ अहंकार के सौदे होते हैं वहाँ जजमैन्ट कहलाये।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति को माफ़ कैसे किया जाए?

दादाश्री : उसके प्रति चिढ़ नहीं कि कुछ नहीं, खुद की प्रकृति के प्रति चिढ़ मत रखना, तरफ़दारी मत करना और माफ़ कर देना मतलब उसके प्रति राग भी नहीं और द्वेष भी नहीं, वीतरागता रखना। खराब तो निकलेगा ही। ज्ञानी को भी खराब निकलता

है कभी, पर उसके प्रति हम वीतराग हो जाते हैं, तुरंत ही।

प्रकृति से जो-जो होता है, वह क्यों होता है? उदय में आया है इसलिए। प्रकृति को जो भुगतना आया है वह भुगतते हैं। यह मैं जो बोलूँ, इसके लिए मन में फिर सवाल उठे कि यह किसलिए बोलना हुआ था? लेकिन उसमें हमारी कुछ चलती नहीं, क्योंकि प्रकृति में जो बुना गया है इसलिए वह बोले ही, उसे हमें देखा करना है। मैं जो कहना चाहता हूँ यह समझ में आया कि नहीं आया? पूर्ण रूप से समझ में आ जाए तो काम हो जाए।

दिखाई दिया तो हम बॉस और नहीं दिखाई दिया तो प्रकृति बॉस

प्रश्नकर्ता : मान लीजिए कि किसी की प्रकृति कायमी तौर पर दखलअंदाज करने की आदी है तो 'मेरी प्रकृति तो ऐसी ही है' ऐसा करके उसकी तरफ़दारी तो नहीं करनी चाहिए न?

दादाश्री : तरफ़दारी करे तो उसे भी हमें जानना है। तरफ़दारी करनेवाली प्रकृति ही है।

प्रश्नकर्ता : मगर पुरुषार्थ में रहने के लिए, उस प्रकृति को घोड़ा बनाकर, लगाम अपने हाथ में लेकर, उस पर हम सवार हो जाएं। फिर हमारे एक बार मना करने, दो बार मना करने पर भी नहीं माने तो क्या हम समझ लें कि प्रकृति हम पर सवार हो गई है? वहाँ हम प्रकृति पर कैसे सवारी करें?

दादाश्री : हमें प्रकृति दिखाई देती रहे वहाँ तक हम उस पर सवार हैं, प्रकृति दिखाई नहीं देती मतलब वह हम पर सवार है।

प्रश्नकर्ता : उसके माने यह कि हमारी बुरी प्रकृति को देखा यानी वास्तव में हम उस पर सवार ही हुए हैं। मान लीजिये कि शंका करना मेरी प्रकृति है, अब ऐसे संयोग पैदा हुए कि मुझे शंका होने लगी, मतलब ऐसी प्रकृति तो बहुत बुरी कहलाये, क्योंकि शंका तो होनी ही नहीं चाहिए। तब उस प्रकृति को सीधी करने क्या किया जाए?

दादाश्री : हम सीधे हो जाएं।

प्रश्नकर्ता : मतलब वह जो करती है, उसे करने देना?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसे आम तौर पर देखा जाए तो जब हम खुद को देख रहे होते हैं तब खुद की प्रकृति को देखते हों ऐसा लगता रहता है, कि सुबह से लेकर शाम तक प्रकृति क्या किया करती है?

दादाश्री : प्रकृति को ही देखना है।

प्रश्नकर्ता : और इर्द-गिर्द देखें तो दूसरों की प्रकृति भी दिखाई दे ऐसा होता है।

दादाश्री : सब दिखाई दें। उसमें जो दिखाई दे देखना चाहिए। हमें खोटें (गलतियाँ) कहाँ देखनी है? प्रकृति दिखाई दे। प्रकृति में खोट किसे कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : दादाजी, मगर ऐसा है न, कि पहले की ऐसी कई आदतों के कारण 'ऐसा नहीं होना चाहिए, ऐसा होता है वो नहीं करना चाहिए.' ऐसा बोल देते हैं।

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। प्रकृति में खोट कौन देखता है कि जिस में अभी भ्राँति के गुण शेष हैं, वह देखता है। भगवान के वहाँ खोट जैसा है ही नहीं। सब ज्ञेय ही हैं। भगवान के वहाँ यह अच्छा और यह बुरा ऐसा भाव ही नहीं है, वहाँ पर द्वन्द्व नहीं है। इसलिए फिर वहाँ ऐसा नहीं देखना है। हम वहाँ कुछ खराब भी हो, तो उसे भी अच्छी तरह देखते हैं। सब कुछ देखते हैं पर अंदर में हमारे भाव नहीं बिगड़ते। हमारा ज्ञान नहीं बिगड़ता। यह अच्छा-बुरा तो समाज का बनाया हुआ है। हमारा खराब हो वह दूसरों को अच्छा लगता हो। मुझे जलेबी भाती हो और आप मना

करते हों। यानी अच्छे-बुरे का सवाल ही कहाँ रहा? यह तो ज्ञानी के पास से फेक्ट (सत्य) समझ लेने की ज़रूरत है। हम निरंतर इसी तरह रहते हैं। आपकी अड़चन के बारे में पूछ लेना और आप अड़चन के बारे में पूछेंगे तो मैं जवाब दूँगा। वरना यह सब तो भ्राँति में था ही न? अच्छा-बुरा यह सब कहाँ नहीं था?

प्रश्नकर्ता : आज तक सब यही किया था न?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। यह सब भ्राँति में था ही न! मगर सेटिंग (समायोजन) करते-करते (बीच में) ऐसा सब आने पर फिर से पूछ लेना ताकि निकल जाए। बाद में थोड़ा समय व्यतीत होने पर फिर विस्मृत हो जाए। फिर आये, फिर विस्मृत हो जाए। ऐसा करते-करते यह जो भांति है वह कम होती जाए। सब से अंतिम स्टेज (कक्षा) कौन-सा कि चन्दुभाई क्या करते हैं, उसे आप देखें और जानें। और जो हो गया वह करेक्ट (सही) है। ये दो वस्तुएँ सब से अंतिम स्टेज में आती हैं। रहा जाए कि नहीं रहा जाए, इस स्टेज में?

प्रश्नकर्ता : रहा जाए।

दादाश्री : हं... हाँ... फिर क्या? यानी वस्तु हमारे हाथों में आ गई है। पतंग की डोर हमारे हाथों में आ जाने के बाद वह चाहे उतनी पलटी मारे उसमें हमें क्या हर्ज है? डोर खींचते ही सीधा हो जाए। पहले तो हाथों में डोर ही नहीं थी, फिर पलटी मारने पर कैसे हाथों में रहे?

प्रश्नकर्ता : प्रकृति की लगाम हाथ में आई कब कहलाये?

दादाश्री : प्रकृति को मोड़ सके उस दिन पता चले कि हम आज चाहें ऐसे मोड़ सकते हैं। हमें देखने से पता नहीं चलता?

प्रश्नकर्ता : हम प्रकृति देख सकते हैं किन्तु मोड़ नहीं सकते।

दादाश्री : यानी वह फिर ज़रा ज्यादती कहलाये। जब तक वश में नहीं होती, उसे देखते रहेना चाहिए और बाद में वश में आ जायेगी, हमेशा के लिए। जो प्रकृति को जीतना चाहता है, उसे हरानेवाला कोई है नहीं।

रोंग सीट पर बैठे इसलिए

प्रश्नकर्ता : दादाश्री, चन्दुभाई को जो करना है, और चन्दुभाई को जो करना चाहिए क्या वे दोनों वस्तुएँ अलग हैं? यानी उदाहरण के तौर पर चन्दुभाई सिनेमा देखना चाहते हैं और घर पर मेहमान आयें हैं इसलिए घर में उसे काम करना चाहिए, ऐसा उसे मालूम है। लेकिन इसके लिए उसकी सिन्सियारिटी नहीं है तो वहाँ सिन्सियारिटी कैसे लाना?

दादाश्री : आप धीरज धरें और क्या होता है इसे 'देखा' करें। इतना काफी हो गया। मतलब कंप्लिट सिन्सियारिटी आ गई उसमें।

प्रश्नकर्ता : मगर चन्दुभाई की आदत है कि आग में ही हाथ डालने जायेंगे।

दादाश्री : उस हालात में भी हमें 'देखना' चाहिए कि चन्दुभाई ने कितना हाथ डाला, आधा डाला कि पूरा डाल दिया, वह 'देखना'। आप तो क्लिअर (स्पष्ट) हैं, आपको मैंने क्लिअर जगह पर (अपने स्वरूप में) बिठाया है। आप क्यों अन्क्लियर होते हैं? आप किस जगह पर बैठते हैं? 'रिजर्वेशन' (आरंक्षण) पर न? आपने रिजर्वेशन करवाया है उसी सीट पर बैठते हैं न कि अनरिजर्वड सीट पर बैठनेवालों में से हैं?

प्रश्नकर्ता : वहाँ उस दूसरी सीट (प्रकृति अनात्मा में) पर बैठना हो जाता है, इसलिए वहाँ कैसे नहीं बैठा जाए और अपनीवाली सीट (शुद्धात्मा में) पर कैसे चिपककर बैठे रहना? मतलब बार-बार कर्तापन में आ जाते हैं, वहाँ क्या करना?

दादाश्री : दूसरी सीट पर बैठ जाएं और शोक (झटका) लगे तो समझना कि यह हमारी सीट नहीं है। और शोक लगने पर उठ जाना वहाँ से। शोक लगे वह सीट हमारी नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : शोक लगने पर भी वह उठता नहीं है, तो वह कैसे उठ पायेगा? क्योंकि ज्ञाता-द्रष्टा वह रह नहीं पाता, तो उसे कैसे रहना?

दादाश्री : दूसरी सीट पर से उठता नहीं है, उसे भी आप देखिये। वह आप नहीं है। एक 'चन्दुभाई' है और एक 'आप' हैं। जो उठता नहीं है वह चन्दुभाई। हम चन्दुभाई से कहें, 'चलिए भैया सो जाइये, या फिर बैठना हो तो बैठिये, आप जैसा चाहे वैसा करें! मैं देखा करूँगा।' सोल्युशन तो होना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : मतलब जो होता है उसे नोट (उस पर नज़र रखना)?

दादाश्री : प्रत्येक क्रिया को देखना। वह यदि किच-किच करता हो तो फिर भी हमें उसे देखना है कि 'वह भी मेरा स्वरूप नहीं है' ऐसा कहना। ऐसा यह दादाई ज्ञान है। ऊपर कोई नहीं, विधाउट (बिना) बॉस। ऊपरवाले के भी ऊपरवाले, वे दादा भगवान।

प्रश्नकर्ता : वह जो किच-किच करता है वह कौन-सा हिस्सा है?

दादाश्री : वह दूसरा हिस्सा है, वह चन्दुभाई के पक्ष का है।

प्रश्नकर्ता : मतलब वह जो किच-किच करता है उसे भी देखा करना?

दादाश्री : हाँ, उसे भी देखना।

प्रश्नकर्ता : यानी जो देखते हैं वे तो कुछ बोलते ही नहीं, खाली देखते ही हैं।

दादाश्री : जो देखता हैं उसका कोई मालिक नहीं है। उसे कोई डाँटनेवाला नहीं होता, कुछ भी नहीं होता। अनंत शक्तियाँ पड़ी हैं किन्तु चन्दुभाई का रक्षण करते हो, इसलिए सारी शक्तियाँ आवरण में बैठी रहती हैं। सरे आम चन्दुभाई का रक्षण करते हो न? तभी यह शक्तियाँ खिलती नहीं है। यदि पाँच आज्ञा का पालन करें तो भी निरंतर समाधि बनी रहे। आप अपनी सीट पर और चन्दुभाई उनकी सीट पर बैठे रहें। चन्दुभाई की सीट पर बैठने जाते हैं, उसकी ही मुसीबत है। पहले की आदत जो बनी हुई है इसलिए।

आपको बाहरवाली सीट से खिसककर अपनी खुद की सीट पर बैठना है। अब हमारी सीट कौन-सी? भीतर चार-पांच प्रकार की सीटें हैं। उनमें हमारी सीट कौन-सी कि जिस पर एकदम ईज़ी (सरलता) महसूस हो, वही हमारी सीट। जरा-सा भी नुकसान होता लगे तो समझना कि यह दूसरी सीट पर आ गये। चुभन हो तो जानना या शोक लगे तो समझ जाना कि यह पराई सीट है। उन सभी सीटों पर नहीं बैठते, अपनी सीट पर ही बैठना।

कोई तो खुशामद करेगा, 'चन्दुभाई साहब, आप तो बड़े होनहार हैं, बहुत अच्छे हैं।' लेकिन वह मसका हमें नहीं लगना चाहिए। चन्दुभाई की सीट वह हमारी सीट नहीं है। वहाँ से तो दादाजी ने खिसकाया है। 'मैं चन्दुभाई हूँ' इसकी सारी मार पड़ती थी।

कुछ भी भुगतना हुआ तो समझ में आये कि यह मैं दूसरी सीट पर बैठ गया हूँ, यह सीट मेरी नहीं है। इसलिए वहाँ से उठकर शुद्धात्मा की सीट पर आ जाना। हमारी अपनी सीट पर आ जाना पर तू तो वहीं बैठा रहता है मानों शुद्धात्मा की सीट पर बैठने का डबल चार्ज देना पड़ता हो वैसे। मन कुछ भी उलटा विचार करे तो तुरंत ही समझ जाना कि यह मैं दूसरी सीट पर हूँ। यह मेरी सीट नहीं है। शीघ्र ही अपनी खुद की सीट पर चले जाना। तू क्या बहुत देर तक उस पर बैठा रहता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादाजी ऐसा होता है।

दादाश्री : इसलिए तेरा मुँह उतरा हुआ दिखाई देता है। मैं कहूँ 'इसका मुँह क्यों उतरा हुआ है?' कोई अड़चन आने पर अपनी खुद की सीट पर चले जाना, शीघ्र ही। जो दोष हो गये हों, उनकी माफ़ी माँग लेना फिर।

उलझन में पड़ने जैसा यह जगत् नहीं है। शरीर में कहीं उलझन पैदा हुई कि तुरंत अपनी सीट पर बैठ जाना और देखा करना। फिर पूछना, 'चन्दुभाई, क्या उलझन है आपको?'

ज्ञान के पीछे वर्तन आयेगा ही

अब मैं ऐसा बर्ताव करने को नहीं कहता कि आप अपनी प्रकृति का रक्षण नहीं करना। लेकिन आपके मन में ऐसा लगना चाहिए कि यह ज्ञान आपको ऐसा समझना चाहिए। मैं वर्तन नहीं माँगता। वर्तन में तो कब आयेगा? वह श्रद्धा, प्रतीति फीट बैठ जाए फिर वह ज्ञान परिणमित होगा। ज्ञान दिन-ब-दिन उसे अनुभव में आता जाए, तब वर्तन में आये।

कोई हमें गाड़ी में बिठाकर फिर उतार दे तो असर हो जाए और बाद में गुस्सा ठंड़ा होने पर ज्ञान याद आये। ऐसा करते-करते ज्ञान फीट हो जाए। पहले प्रतीति में आये फिर अनुभव में आते-आते थोड़ा समय ज्ञान में लुढ़का करें और बाद में वर्तन में आये। लेकिन थोड़ा बहुत यदि अनुभव में आ गया तो बहुत हो गया।

एक-दो बार भी यदि गाड़ी से उतार देने के बाद बिना नाराज़ हुए, आकर फिर बैठ जाए तो भी बहुत अच्छा कहलाये। हाँ, वरना चेहरा खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे, ऐसा हो जाए न? मुझे लगता है आपको ऐसा नहीं होता होगा? ऐसा वक्त आने पर एकबार उतर जाना और यदि फिर से बैठने को कहे तो बिना खिसियाये (नाराज़ हुए) बैठ जाना।

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं उतना आसान नहीं है वह।

दादाश्री : आसान नहीं होता। मगर अनुभव में क्या आता है? हम यह बात किस लिए करते हैं? कि यह बात श्रद्धा में बैठ जाए तो धीरे-धीरे अनुभव होता जाए।

निबटारा लाईये ज्ञान से

ऐसा करने को हम नहीं कहते। यह जान लेना है कि ऐसे हमें प्रकृति का रक्षण करना बंद करना होगा। जितना प्रकृति का रक्षण किया जाए उतना गलत है न? पड़ौसी के रूप में उसके प्रति फर्ज अदा करना लेकिन ऐसे रक्षण थोड़े ही किया जाए? कोई उतार दे तो उतर जाना और फिर से बुलाये तो बैठ जाना।

प्रश्नकर्ता : हर अवसर पर यह प्रकृति है, ऐसा कई बार खयाल में नहीं रहता है।

दादाश्री : उतनी जागृति नहीं रह पाये। इसलिए तो हम यह बार-बार हिलाते रहते हैं कि जिससे आप जागते रहें। किन्तु आप हम जब जगायें तब आप कहें, 'हाँ, उठा अभी, हाँ उठता हूँ।' कहकर फिर करवट बदलकर सो जाए।

हमारे पास 'व्यवस्थित' का कितना सुंदर ज्ञान है! साधन नहीं है क्या 'व्यवस्थित' का?

प्रश्नकर्ता : है, साधन बहुत अच्छा है।

दादाश्री : निबेड़ा आयेगा। निबेड़ा आयेगा (छूटकारा होगा) इसका विश्वास हो गया न?

विज्ञान से छूटे अपनापा !

प्रश्नकर्ता : हमारे ज्ञान में यदि 'व्यवस्थित' सही समझ में आ जाए तो अपनापा छूट जाए न?

दादाश्री : छूट जाए न? 'व्यवस्थित' मैंने अपनापा छोड़ने हेतु ही दिया है और वह है भी 'एक्झेक्ट' (यथार्थ)। 'व्यवस्थित' यानी 'सायन्टिफिक' वस्तु है। वह कोई अंदाजन दी गई वस्तु नहीं है। अवलंबन गलत नहीं दिया, 'एक्झेक्ट' (सुनिश्चित) है।

प्रश्नकर्ता : यह तो अपनापा छोडना नहीं है और अपनापा छोड़े बगैर वस्तु प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं, यह कैसी बात है?

दादाश्री : हाँ, इसलिए हम क्या कहते हैं कि अपनापा छूट जाए तो अपने आप चलता रहे ऐसा है। बिना वजह क्यों पकड़ कर रखते हो, जैसे बन पड़े छोड दो न। लेकिन छोड़ नहीं पाये न? कहे कि, 'ऐसा हो जायेगा और वैसा हो जायेगा।'

यह 'ज्ञान' लिया मतलब 'खुद' शुद्धात्मा हो गये, 'प्रकृति मेरी नहीं हो सकती' ऐसा कहते हैं, मगर फिर क्या करते हैं? प्रकृति का रक्षण करते हैं। प्रकृति का रक्षण करने में शूरवीर, रक्षण करे कि नहीं?

प्रश्नकर्ता : यही किया करते हैं।

दादाश्री : क्या बात करते हैं! रक्षण करे! यह रक्षण हो जाता है, यही जानना है। उसे जानने पर सब अपने आप धीरे-धीरे छूटता जाए। एकदम से छूट जाए ऐसा करने की ज़रूरत नहीं है। वरना बुखार चढ़ जायेगा। वह तो उसे जानने से धीरे-धीरे छूटता जाए।

अपनापा को हमने क्या कहा?

प्रश्नकर्ता : प्रकृति का रक्षण करना वही अपनापा।

दादाश्री : तो क्या प्रकृति का रक्षण करना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : क्या करना और क्या नहीं करना? हम तो 'देखनेवाले' हैं न?

दादाश्री : हाँ, 'देखनेवालों' को अपनापा होता ही नहीं है। यह बात तो जो अभी प्रकृति का रक्षण करते हैं उनके लिए है।

आप यहाँ से होकर जा रहे हों और वहाँ दूर तक जाने के बाद कोई कहे कि, 'नहीं, उधर से होकर जाने का है।' उस घड़ी अंदर ज़रा धक्का लगता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

दादाश्री : वही प्रकृति का रक्षण। वरना उतनी ही 'स्पीड' में वापस इस ओर मुड़ जाए। उसी 'स्पीड' में और ऐसे ही 'टोन' (लहजा) में और ऐसे ही 'मुड' (मिज़ाज) में। जो पहले 'मुड' था वैसा ही 'मुड' रखकर लौट जाए। यह तो अंतिम दशा की बात बताई।

कसौटी, अपनापा की

आपको गाड़ी में कहीं जाना हो और किसी ने आप से कहा, 'आइये, बैठ जाइये गाड़ी में'। बिठाने के बाद कोई दूसरा कहे, 'उतर जाइये, एक भाई और आनेवाले हैं।' उस वक्त, आप क्या करेंगे? बैठे रहेंगे न? 'नहीं उतरूँगा' ऐसा कहेंगे न?

और उतारने के बाद थोड़ी दूर जाकर आवाज़ दे कि, 'आइये, बैठ जाइये' तो वापस आयें न? मुँह पर कोई असर नहीं होगा न?

मेरा कहना क्या है कि ऐसा उतारना-बिठाना नौ बार हो और आप पर उसका ज़रा-सा भी असर नहीं होता है, तो जाइये आप हो गये 'दादा' (मतलब दादा जैसे हो गये)। ऐसा नौ बार करें और नौ बार उतर जाएं और उतारनेवाले को कर्ता नहीं मानें, बुलानेवाले को भी कर्ता नहीं मानें, 'व्यवस्थित' को ही कर्ता मानें। वापस बुलाने पर मन में कुछ भी नहीं, हँसते-हँसते वापस आना और हँसते-हँसते उतर जाना, आनंद ही आनंद बरतता रहे। तब वह क्या कहलाये? कि यह भाईजी प्रकृति का रक्षण नहीं करते हैं और इनका अपनापा चला गया है।

खुद प्रकृति का रक्षण करना वही अपनापा। यह तो जिस प्रकृति से छूटना है उसी का रक्षण करते हैं।

रक्षण वही लक्षण अपनापा का !

अपनापा है कि नहीं?

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी खड़ा हो जाता है।

दादाश्री : नहीं तो क्या रहता है? आत्मा के रूप में रहता है? अपनापा नहीं रहा वह निरंतर जागृत होता है। जितनी जागृति नहीं है वह सारा अपनापा ही है। कोई ऐसा कहे कि, 'तुम बुरे हो'। तो तुरंत अपनापा खड़ा हो जायेगा न?

प्रश्नकर्ता : कभी हो जाता है।

दादाश्री : कभी-कभी होता है कि रोज़-रोज़ होता है? कब नहीं हुआ यह बताइये न? यह तो सारा अपनापा ही है न? जहाँ खुद का रक्षण किया वहीं से अपनापा, खुद रक्षण करे वहीं से अपनापा। यह जो प्रकृति का रक्षण करे वह सब अपनापा। प्रकृति का वह मालिकीपन ऐसे श्रद्धा से टूट गया है, पर अपनापा अभी भी नहीं जाता है न!

प्रश्नकर्ता : 'मेरा सही है', ऐसा जब तक है तब तक अपनापा रहेगी ही न?

दादाश्री : सही-गलत होता ही नहीं है। उस अपनापा में हर्ज नहीं है। और कई प्रकार का अपनापा होता हैं न? कोई कुछ कहे उससे पहले ही विस्फोट हो जाए। प्रकृति के रक्षण में लग जाए, यानी रक्षण तो करे मगर कपट करके उलट-पलट भी कर डाले। वहाँ पर अपनापा डबल हो गया। खुद की जी-जान से रक्षा करना, उसी का नाम अपनापा। आज तो सभी अपनापा को बचाते हैं और ऊपर से कला दिखाकर खिसक जाएं, ऐसा भी लोग करते हैं। यानी ऊपर से कला भी करते हैं। कला यानी कपट।

अपनापा माने समझ गये न? अभी भी खुद की जात की रक्षा करते हैं और उसमें भी कपट करके, कला करके भी रक्षा करते हैं।

प्रश्नकर्ता : खुद की प्रकृति का रक्षण करना उसे अपनापा कहा, तो फिर वह हिस्सा कपट में कब गिना जाता है?

दादाश्री : पूरा अपनापा प्रकृति के रक्षण में ही जाता है, लेकिन कुछ रक्षण में कपट नहीं होता ऐसा अपनापा अच्छा कहलाये, मृदु कहलाये और जिसमें कपट हो वह बुरा कहलाये।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि प्रकृति का रक्षण करना वह अपनापा है। कला दिखाकर रक्षण करे कपट करके भी रक्षण करे, वह डबल अपनापा।

दादाश्री : हाँ, वह डबल अपनापा। लड़के भी रक्षण करते हैं मगर वे (स्त्रियों की तरह) कला दिखाकर नहीं करते।

प्रश्नकर्ता : खुद को पता चले कि यह कपट किया, कला दिखाकर भी खुद की प्रकृति का रक्षण किया तो वह क्या कहलाये?

दादाश्री : कपट उतना पतला रहा तो मालूम हो जाए। कपटी को भी पता चल जाए। बड़ा-भारी कपट रहा तो पता तक नहीं चलता।

'अटैक' वहाँ डबल अपनापा

अपनापा छोड़ने की इच्छा है?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

दादाश्री : किन्तु पहले तो हम से किसी को दुःख होना बंद होगा, उसके बाद वे आवरण हटेंगे।

प्रश्नकर्ता : कौन-से आवरण?

दादाश्री : अपनापा के और अन्य सभी आवरण। और यह तो अपनापा दिखाते हैं सही, किन्तु अपनापा 'अटैक'वाला (आक्रमक) अपनापा, रक्षणात्मक अपनापा अलग और 'अटैक'वाला अपनापा अलग।

प्रश्नकर्ता : यह बड़ी बात निकली। एक रक्षणात्मक और दूसरी आक्रमक।

दादाश्री : हाँ, मतलब आक्रमक जाए तो फिर रक्षणात्मक आयेगी। तब वह अपनापा खुदी कहलाये। वरना तब तक वह हिंसकभाव ही कहलाये। और

'अटैक'वाला अपनापा छूटने के बाद वह रक्षणात्मक अपनापा छूटने की शुरूआत होती है।

प्रश्नकर्ता : 'अटैक'वाला अपनापा के बारे में ज़रा विस्तार से समझाइये?

दादाश्री : किसी को दु:ख पहुँचे ऐसा अपनापा किस काम का? अपनापा हमारी प्रकृति का रक्षण करने हेतु होता तो अलग बात थी। उसे अपनापा कहलाये। वह आक्रमक अपनापा वह अपनापा भी नहीं कहलाये।

लोगों का अपनापा कैसा है? प्रकृति का रक्षण करने की बात तो है ही, लेकिन उलटे 'अटैक' भी करते हैं। सामनेवाले पर प्रहार भी करते हैं। यही बड़ा अपनापा निकालना है। प्रकृति का रक्षण करना वह अपनापा। हमारे महात्मा ऐसा रक्षण करते होंगे? इसी कारण सहज नहीं हो पाते हैं। यह तो ज़रा-सा अपमान करे कोई, इससे पहले रक्षण करे, ज़रा-सा और कुछ किया कि रक्षण करे। यह सब सहजता होने ही नहीं देता।

कुछ प्रकार से प्रकृति का रक्षण रहे, लेकिन और सभी प्रकार का अपनापा जाना चाहिए। 'आप कमअक़्ल हैं' ऐसा कहें, वहाँ रक्षण नहीं करना चाहिए। उसका स्वामी कौन है? अहंकार। प्रतिकार करे वह अहंकार। उसका प्रतिकार कौन करता है? अहंकार। किन्तु (ज्ञान मिलने के बाद) अहंकार तो रहा नहीं है, और झूठा रक्षण करते हैं।

वह तो जितना हो सके उतना सही। लेकिन प्रकृति के रक्षण की बात शास्त्रों में नहीं होती है। क्योंकि प्रकृति का रक्षण कौन नहीं करता? भगवान के सिवा और सभी प्रकृति का रक्षण करते हैं। और आप, प्रकृति पराई है फिर भी रक्षण करते हैं। पराई है ऐसा जानने के बावजूद, पराई जाई (कन्या) को ब्याहने की तैयारी में लगे हैं, यह भी अजूबा है न! अहंकार, ममता गये हैं पर अपनापा रहा है। देखिये न, यह अजूबा ही है न!

महात्मा, करके रिहर्सल रहें तैयार

यदि आप आत्मा होकर रहते हैं तो सारे कर्मों की निर्जरा है और आत्मा होकर नहीं रहते, यानी ज़रा-से भी डगमगाये कि उस कर्म का ज़रा-सा दाग़ लग जायेगा। क्योंकि जो है उसमें आपकी मान्यता नहीं है, आपकी भूल होती है वहाँ।

प्रश्नकर्ता : स्वपद में से परपद में खिसक जाते हैं?

दादाश्री : नहीं, खिसक नहीं जाते। परपद में नहीं जाते। किन्तु उसके मन में ऐसा होता है कि, 'यह कौन है फिर? मेरी ही भूल है न यह?' लेकिन वह 'मेरी भूल' तो कब कहलाये? जब तक हम 'चन्दुभाई' थे तब तक भूल थी। अब तो हम 'शुद्धात्मा' हो गये। शुद्धात्मा तो ऐसी भूलवाला है ही नहीं। इसलिए ऐसा होने लगे तब कहना कि, 'अहह! चन्दुभाई बहुत भूलें होती हैं। हद कर दी।' ऐसा कहने से क्या होता है? ऐसा हम बोलें न, वही चन्दुभाई से हमारा अलगपन का निर्देश करता है। और आपकी जिम्मेदारी का एन्ड (अंत) होता है वहाँ पर।

हमारा ज्ञान तो ऐसा है कि कोई आपसे कहे कि, 'आप हमारी घड़ी चुरा गये।' तब कहना कि, 'भैया, आपको जो लगे वह सही'। हमें आत्मस्वरूप होकर जवाब देने है। फिर उस समय आप चन्दुभाई हो जाएं, फिर दिया गया आत्मा चला जाए। यानी हमारी अक्रम विज्ञान में यह झंझट है (मतलब कर्मो की निर्जरा किये बगैर आत्मज्ञान प्राप्त हुआ है, इसलिए आरोप आने पर डिस्चार्ज अहंकार उछल पड़ता है।)

प्रश्नकर्ता : झंझट होने के बावजूद भी उस समय जागृति विकसित होती जाए। यह जागृति के विकास का मार्ग है।

दादाश्री : हाँ, जागृति एकदम बढ़ जाए, जागृति बहुत बढ़ जाती है। लेकिन वस्तुस्थिति में उस समय दख़ल होते ही तुरंत स्वीकार कर लेते हैं। 'मैंने कहाँ चोरी की है?' अरे! मगर रक्षण क्यों करता है? जो तेरा नहीं, उसका तू रक्षण क्यों करता है? जो तेरी बात ही नहीं है, उसका रक्षण करने की तुझे ज़रूरत ही नहीं है। स्वीकार करने के बाद हमारी ही भूल कहलाये। यद्यपि बाद में उसे पता लग जाता है कि यह हमारी भूल हो गई। चाहे बाद में पता चल जाए, मगर उतनी जागृति तो है।

यह ज्ञान ही मोक्ष में ले जाए ऐसा है। मगर आपकी जागृति से उसे ज्यादा हेल्प करनी चाहिए, पुरुषार्थ करना चाहिए। पुरुष होने के बाद पुरुषार्थ होता है। पुरुष और प्रकृति दोनों जुदा हुए। जब तक आप 'चन्दुभाई' थे, तब तक प्रकृति थी। इसलिए प्रकृति जैसे नचाती थी वैसे आप नाचते थे। आप पुरुष हुए और प्रकृति अलग हो गई। पुरुष होने के बाद पुरुषार्थ उत्पन्न होता है। पुरुषार्थ में वह जागृति तो है ही। पुरुषार्थ में हमें और क्या करना है? हमें तय करना चाहिए। स्थिरतापूर्वक चन्दुभाई के साथ सारी बातचीत करनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब यह हुआ कि सही-गलत का आग्रह नहीं रखना चाहिए?

दादाश्री : सही-गलत तो मानो है ही नहीं। यह आग्रह तो रखना ही नहीं है। मगर आपको कभी ऐसा अनुभव भी नहीं हो और कोई आप से कहे कि, 'आपने चोरी की', यानी कभी सुनने भी नहीं आया हो, जिसकी कभी प्रैक्टिस ही नहीं हो, जिसके हम आदी ही नहीं हो और एकदम से कोई सुनाएँ कि 'आपने चोरी की' तो परिणाम क्या होगा? इमोशनल हो जाएं। इसलिए हमने चन्दुभाई से कहा कि 'भैया, चोर ही हो, कोई चोर कह दे तो घबराना नहीं।' ऐसा आगे से हमें चन्दुभाई से कह देना चाहिए। हाँ, 'कोई कुछ कहे तो घबराना नहीं। कोई थप्पड मारे तो भी घबराना नहीं।' ऐसा हम बोल के रखें। वरना फिर कोई थप्पड तो नहीं मारता मगर यों ही हाथ उठाकर मारने का दिखावा करे तो भी असर हो जाए। इसलिए ऐसी प्रैक्टिस रखनी पड़े। ऐसा रिहर्सल कर लेना चाहिए। नहीं कराना चाहिए? रिहर्सल करा लेना बेहतर। न जानें कब क्या मुसीबत आकर खड़ी हो जाए? यदि रिहर्सल करा लिया हो तो फलदायी होता है। वरना यह ज्ञान तो अनेक मनुष्य को निरंतर समाधि में रखता है।

आप 'चन्दु' या शुद्धात्मा?

अब क्या प्रश्न है? क्या कहना चाहता है तू?

प्रश्नकर्ता : दादाजी, प्रश्न मैंने नहीं पूछा था, इस बहन ने पूछा था।

दादाश्री : वह किसी ने भी पूछा हो लेकिन तेरा प्रश्न है ऐसी आवाज आई थी।

प्रश्नकर्ता : मेरा प्रश्न नहीं था, दादाजी।

दादाश्री : उसमें तुम्हें क्या लेना-देना है? तुम शुद्धात्मा, तुम्हें क्या लेना-देना? तुम शुद्धात्मा हुए फिर भी चन्दुभाई का (अपनी प्रकृति का) पक्ष लेते हो?

प्रश्नकर्ता : नहीं ले सकते, दादाजी।

दादाश्री : यह पक्ष लिया न? यह सब सरे आम देख लिया सभी ने। प्रश्न चाहे किसी का भी हो मगर प्रश्न तो आपने ही पूछा था न? मैं तो यही समझूँ, कि आपने पूछा है। मगर आपने मतलब किसने पूछा? वह चन्दुभाई ने पूछा न? आप तो शुद्धात्मा हैं, आपको क्या लेना-देना है? मतलब हमें कहना चाहिए कि, 'चन्दुभाई ने प्रश्न किया मगर यह चन्दुभाई का खुद का नहीं (किसी और ने पूछा है)।' फिर हम पूछें कि, 'तो फिर किसका है?' तब कहना चाहिए कि, 'इस बहन का प्रश्न है।' और वह भी उनका खुद का भी नहीं है, वे भी शुद्धात्मा, यह सब लक्ष्य में रहना चाहिए। ज्ञान उसी का नाम। रिलेटिव और

रिअल सब लक्ष्य में नहीं रहना चाहिए क्या?

प्रश्नकर्ता : रहना चाहिए, दादाजी।

दादाश्री : हाँ में हाँ मिलाते हो, किन्तु रहता तो नहीं है और फिर चिल्लाते हो। लक्ष्य में तो रहना चाहिए न? आपका निश्चय होना चाहिए कि मुझे यह लक्ष्य में रखना है, फिर दादाजी की कृपा उतरे। आपका ही ऐसा निश्चय नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : आप तो सारे आवरण हटा देते हैं। बाक़ी हमने तो जितना जाना हो कि जितना सुना हो, जितना पढ़ा हो, उसके आगे खुद से नया कुछ खड़ा नहीं होता। आप दिखलायें कि तुरंत पता चल जाए कि यह तो ऐसी बात थी लेकिन हमें दिखाई ही नहीं देती थी।

दादाश्री : वरना वह दिखाई नहीं देगी न!

प्रश्नकर्ता : आपने जो कहा कि वह तो चन्दुभाई का प्रश्न है, तू तो शुद्धात्मा है, तुझे क्या लेना-देना? मतलब ऐसे दोनों ओर से जुदापन समझकर...

दादाश्री : वह जुदापन, उसका नाम ही ज्ञान कहलाये। हमने जो दिया है वह ऐसा ही ज्ञान दिया है। लेकिन यह आपकी पहलेवाली वे आदतें है न, वे छोड़ेगी नहीं! शुरू से जो आदत हो गई है! इसलिए उसका आदी हो जाए। उसमें हर्ज नहीं है, प्रकृति है इसलिए ऐसा हो जाए। किन्तु जागृति में रहना चाहिए कि ऐसा नहीं होना चाहिए।

समझो बात, ज्ञानी के ज्ञान से

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी को छोड़कर सारे जगत् के लोगों की बातें अपने-अपने व्यू पोइन्ट (दृष्टिबिंदु) के अनुसार ही होती हैं न?

दादाश्री : अपने-अपने व्यू पॉइन्ट के अनुसार ही होती हैं और वह व्यू पोइन्ट भी सही रहा तो ठीक है। वह भी उनकी समझदारी से सही होता है। अब वहाँ सुनना, हाँ में हाँ मिलाना और दिन गुजारना। वर्ना ऐसा करने पर भी कोई परिणाम नहीं। जितना सच्चा होता है उतना परिणाम मिलता है।

सभी अपनी-अपनी जबान में बात करें। और मैं भी ऐसा कहूँ कि उनकी अपनी भाषा में वे जो कहते हैं ताल वह करेक्ट है लेकिन उसका मेरी भाषा से उसका तालमेल नहीं बैठता।

प्रश्नकर्ता : आपकी भाषा में वह निरंतर शुद्ध उपयोग कैसा होता है?

दादाश्री : ऐसा तो आपने देखा ही नहीं है, सुना भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इसके बारे में कुछ कहिये न?

दादाश्री : नहीं, वह मुँह से नहीं कहा जाए, वह तो अनुभव की वस्तु है। वह तो अपने आप आकर खड़ा रहे। अभी तो यह स्थूल सूझ खड़ी हो और वह सूक्ष्मतम होता है। अब सब अपनी-अपनी जबान में ही बात करे न? आप सूक्ष्मतम को समझते हों और वह स्थूल बता रहा हो। अब वह सूक्ष्मत्तम थोड़े ही समझनेवाला था? वह तो स्थूल ही बतायेगा।

हमारे पास से यह ज्ञान जो सुना है, वह ज्ञान ही काम किया करे। हम जिस राह चले हैं उस राह का ज्ञान आप सुन रहे हैं, वह राह ही आपका काम बना देगी। हमें तो इतना कह देना है कि, 'दादाजी आपके पीछे-पीछे आना है।' यानी फिर हम अपना रास्ता आपको दिखा दें।

'मेइन लाइन' पर आ गये इसलिए अब कोई हर्ज नहीं हैं। गाड़ी दूसरी पटरी पर चढ़ गई थी ऐसा समझे तो भी निपटारा हो जाए। बिना समझे पड़े रहने पर मुसीबत, वह तो यही समझे कि हमारी भूल नहीं है।

प्रश्नकर्ता : ऊपर से ऐसा माने?

दादाश्री : हाँ, ऊपर से रक्षण करे। मगर यदि किसी की भी भूल दिखाई दे तो वह हमारी ही भूल

है। उसकी भूल उसे देखनी है। दूसरों को उसकी भूल देखने का क्या अधिकार? यह तो बिना बजह न्यायाधीश होने जाते हैं। कोई भूल है या नहीं इसका यदि विश्वास नहीं तो क्यों बोलते हैं? यह तो निजी स्वार्थ हेतु बोलते हो। आपके पास सामनेवाले की भूल है या नहीं इसका कोई प्रमाण है?

मन में अपने आप 'लेवल' मत निकालना वरना मनुष्य अटक जाता है। अपने आप 'लेवल' निकालना नहीं, दूसरे निकाल दें वही काम का।

प्रश्नकर्ता : वह मन में 'लेवल' किस बात का?

दादाश्री : इस मोक्षमार्ग में हर कोई अपना-अपना 'लेवल' निकाल कर बैठा होता है और वह बिलकुल गलत होता है। और 'लेवल' मानकर बैठ जाने पर मनुष्य वहीं का वहीं अटक जाए। अभी तो गाड़ी पटरी पर से उतरने में देर नहीं लगेगी। इतनी सारी कमज़ोरीयों के बिच पूर्णता पर पहुँचना है, इसलिए सारी बातें समझनी होंगी। पहले तो कपट ही जाना चाहिए।

यह तो जो अपना नहीं है वहीं पर ही सारी शक्तियाँ खर्च हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : और कपट से फिर उसी को ढँकते हैं, ऐसा न?

दादाश्री : हाँ, उसी को ढँकते हैं। अपना कुछ नहीं फिर भी उसका पक्ष लेते हैं। अरे! तय कर लिया कि अपना कुछ नहीं, फिर भी उसका पक्ष लिया? तब वह कहेगा, 'भूल हो गई।'

प्रश्नकर्ता : वह भूल जाता है या अभी उतना पक्ष छूट नहीं पाया?

दादाश्री : पक्ष छूटा नहीं है। वह तो भूल गया ऐसा तत्क्षण के लिए पर पक्ष छूटे नहीं न!

इसलिए चेतिये, हर प्रकार से चेतिये, बहुत चेतना है।

प्रश्नकर्ता : वह सही बात है। यह जो मोक्षमार्ग का ध्येय निश्चित हुआ है, किन्तु उसके जो बाधक या अनुमोदक कारण है, उनका स्पष्ट विभाजन नहीं होता वहाँ तक गाड़ी इस पटरी पर स्थिर रहना और पूर्णाहुति होना, उसमें बहुत ही मुश्किलें दिखाई देती हैं।

दादाश्री : मुश्किल बोलने पर तो फिर काम नहीं होनेवाला, इसलिए ऐसा बोलना कि यह विज्ञान जो आपने दिया है, वह ऐसा दिया है कि, कोई मुश्किल है ही नहीं।

भूलों का स्वीकार तो वे अलविदा

लोग आकर कहते हैं कि अब हमने यह जाना कि दोष हमारे ही हैं, लेकिन अब आप उन्हें निकाल दीजिये। आप हमें मारें-पीटें, जो भी करना चाहें कीजिये, लेकिन हमारे दोष निकाल दीजिये। अब इसके लिए क्या रास्ता करें?

मतलब यह विज्ञान ही सारे दोष निकालेगा। वरना और किसी विज्ञान से दोष नहीं निकले। बाद में ऐसा कोई फिर से मौका मिले ऐसा नहीं है, इसलिए सँभलकर काम लेना बेहतर होगा।

आप तलाश कीजिये कि दोष ने प्रवेश कैसे किया? उसके बाद पता चलेगा कि दोष कैसे निकलेगा? प्रवेश करता है तब उसे प्रवेश कराना नहीं पड़ता, इसलिए निकालते समय निकालना नहीं पड़ता। जिस वस्तु का प्रवेश कराया हो उसे निकालनी पड़े। यह तो मुझ से आकर कहते हैं कि 'दोष निकाल दीजिये।' अरे! मगर वे कैसे घुस गये? तब कहे, 'एक मनुष्य ऐसे कुसंग में गया वहाँ उसे विश्वास हो गया कि ये लोग मज़े उड़ाते हैं और यह बहुत अच्छा रास्ता है, बहुत अच्छा सुख का रास्ता है।' उसे उस ज्ञान पर श्रद्धा बैठ गई, प्रतीति हो गई।

वैसे इन लोगों के साथ मैं क्या करता हूँ? जो उनकी भूलें हैं वे उनको नकारते हैं कि 'हमारी ऐसी बिलकुल भूल नहीं है, लोगों की भूल है।' उनकी वे भूलें उनको दिखलाता हूँ। फिर उनको प्रतीति होती है कि, 'हंड्रेड परसेन्ट (सौ फीसदी) हमारी ही भूलें हैं, इसका हम स्वीकार करते हैं। अब हमारी इन भूलों को निकाल दीजिये।' ऐसा कहते हैं। मैं कहता हूँ कि 'इनको अब निकालना नहीं पड़ेगा, प्रतीति बैठ गई कि निकलने लगी। आपको केवल मन खुला रखना है कि 'भूलें आप चली जाइये।' बस इतना ही बोलना ज़रूरी है। प्रतीति बैठने पर ही भूल जाती रहे जैसे कि प्रतीति बैठने पर भूल प्रवेश करती है। उसे प्रवेश कराना या निकालना नहीं पड़ता। ये कोई कारखाने थोड़े ही हैं? एक भूल निकालते-निकालते कितना अरसा हो जाता है! अवतारों तक निकल जाते हैं। ये सभी समझ में आये ऐसी बात है न?

प्रतीति में दाग़ नहीं लगना चाहिए। संपूर्ण प्रतीति होने पर श्रद्धा से प्रवेश किया और प्रतीति से बाहर निकले। संपूर्ण प्रतीति होनी चाहिए कि यह दोष ही है। फिर निकल जायेगा। यही नियम है। फिर उसका रक्षण नहीं करे तो दोष चला जाए। लेकिन फिर प्रोटेक्शन (रक्षण) करता ही है। हम कहें कि, 'साहब, आप यह नवसार अभी भी सुँघते हैं?' तो कहेगा, 'उसमें कोई हर्ज नहीं है।' इसे प्रोटेक्शन दिया कहलाये। मन में समझें कि यह गलत है। प्रतीति हो गई हो, मगर फिर प्रोटेक्शन करे। ऐसे प्रोटेक्शन नहीं करना चाहिए। ऐसे प्रोटेक्शन देते होंगे क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी, प्रोटेक्शन देते हैं।

दादाश्री : आबरू चली जाती हो ऐसा जाने। अरे, है ही कहाँ आबरू? आबरूदार तो कहीं कपड़े पहनकर घूमते होंगे? यह तो आबरू को ढाँकते फिरते हैं! ढँक-ढँककर आबरू बचाते रहते हैं! फटने पर सी लेते हैं, बाद में देख लेगे, अभी तो सी ले।

प्रश्नकर्ता : आप सीम्पटम्स् (लक्षण) नहीं देखते हैं और मूल कॉझ (कारण) की दवाई करते हैं, ऐसे डॉक्टर कहाँ मिलेंगे?

दादाश्री : ऐसे डॉक्टर नहीं है इसकी तो यह झंझट है न! ऐसे न तो डॉक्टर मिले हैं और न ही दवाई, इसलिए तो यह तुफान मचा है। इसलिए फिर परिणाम को फटकारने लगे, (जबकि जरूरत है कारण (कॉझ) को बदलने की, तो परिणाम अपने आप सही आयेगा।)

प्रकृति को देखा करें अब

प्रश्नकर्ता : अब प्रकृति जो उसका कार्य करती रहती है, वह कौन-सा काम? गलन होने का?

दादाश्री : हाँ, गलन होने का।

प्रश्नकर्ता : गलन का ही काम। और जो गलन हो रहा है उसमें हम यदि दखलअंदाजी नहीं करें तो प्रकृति अपने आप विसर्जन हो जाती है।

दादाश्री : वह दखलअंदाजी नहीं हो तो। और (फिर से) पूरन होने पर फिर अंत तक चला करे। यानी हमारी यह कौन-सी प्रकृति कम होती जाती है? किसी को ऐसा लगे कि दादाजी के साथ रहने से प्रकृति अब कम हो गई मगर वह जो प्रकृति पूरन होती थी वह बंद हो गई है। गलन तो छोडे ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : तो फिर आप जो कहते हैं उसके बारे में ऐसा समझ में आता है कि आपने जो ज्ञान दिया, उसके बाद अब कुछ भी करना नहीं है, केवल प्रकृति अब जो गल रही है उसे 'देखा' करें।

दादाश्री : प्रकृति को 'देखा' करो। यानी अब कुछ करना नहीं है, फिर भी प्रकृति अलग-अलग तरह की होती हैं। प्रकृति तो पानी के नल की तरह होती है, आधा इंच का नल हो और उसमें आते पानी के नीचे उँगली धरें तो वह झेल सके। पर किसी के

कर्म ज्यादा हो मतलब डेढ़ इंच की नल की धारा जैसा बहाव रहा तो उँगली खिसक जायेगी। खिसक गई मतलब प्रकृति खपी नहीं कहलाये। प्रकृति खड़ी रही और खपाने का समय निकल गया यानी उसे फिर से खपानी बाकी रही।

प्रश्नकर्ता : पर आप जब ज्ञान देते है तब जो लक्ष्य करा देते हैं, उस लक्ष्य के बैठने के बाद फिर मात्र प्रकृति ही शेष रह जाती है न?

दादाश्री : हाँ, दूसरा कुछ भी नहीं रहा।

प्रश्नकर्ता : अब जो प्रकृति शेष रही उस प्रकृति स्वभाव ही ऐसा है कि सहजस्वरूप से गलन होता रहे।

दादाश्री : पाँच आज्ञा का आधार इसलिए देते हैं कि आपको अब बाहर का असर नहीं होता। मतलब प्रोटेक्शन है वह। बाहर क्लिअरन्स रहे (जागृतिपूर्वक कर्म पूरे हो) इसके लिए पाँच आज्ञा हैं, क्योंकि बाहर जगत् में जहाँ देखो वहाँ कुसंग होगा। इसलिए कुसंग का असर, ज़हर नहीं हो जाए इसके लिए ये पाँच आज्ञा है। यानी 'डिस्चार्ज' अपने आप होता रहे। यह तो करने जाए, फिर मालिक हो जाए, और मालिक हुए कि मार पड़े। यह 'डिस्चार्ज' है वह अपने आप चलता ही रहेगा। सो जाने पर भी चलता रहे। यदि जागता रहे तो 'कैसे चलता है' उसमें दखल किया करे।

इसमें हम जो कुछ करें न, उसमें हमारा कर्तापन नहीं होता। ऐसा पहले का लेकर आए हैं। इसलिए हमारा 'डिस्चार्ज' ही यह सब किया करे। (दूसरों को) कर्ताभाव होने पर आज सयानापन दिखाता है कि, 'यह मैंने किया।' जबकि हमारा कर्तापन नहीं होता। 'डिस्चार्ज' ही ऐसा लेकर आए हैं कि सब यों ही चलता रहे और कम होता रहे।

जय सच्चिदानंद

परम पूज्य दादा भगवान का भव्य जन्म शताब्दी महोत्सव

१७ नवम्बर से २५ नवम्बर २००७

सांस्कृतिक कार्यक्रम-भक्ति-थीमपार्क : १७ नवम्बर से २० नवम्बर

आध्यात्मिक ज्ञान शिविर : २१ नवम्बर से २५ नवम्बर

जन्मजयंती दिन : कार्तिक सुद चौदस २३ नवम्बर

ज्ञानविधि : २४ नवम्बर दोपहर ३:३० से ७

स्थल : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सीटी, अहमदाबाद-कलोल हाई वे, अडालज. फोन : (079) 39830100

पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में अडालज में विशेष कार्यक्रम

दिपावली के अवसर पर विशेष भक्ति कार्यक्रम : दि. **९ नवम्बर** (शुक्रवार) रात्रि ८:३० से १०:३०

नूतन वर्ष के अवसर पर पूजन-दर्शन-भक्ति का विशेष कार्यक्रम : दि. **१० नवम्बर** (शनिवार)

सुबह ७ से ८ (प्रक्षाल-पूजा) तथा सुबह ९ से १२ (दर्शन-भक्ति)

स्थल : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सीटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, अडालज. फोन : (079) 39830100

SMS ग्रुप द्वारा पूज्य दीपकभाई के सत्संग और ज्ञानविधि सम्बन्धित जानकारी पाईए (नि:शुल्क)

SMS ग्रुप में Join होने के लिए उत्तर भारत के मुमुक्षु अपने मोबाइल से START DADANORTH तथा दक्षिण भारत के मुमुक्षु START DADASOUTH टाइप करके 5757585 पर SMS करे।

दादावाणी

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में सत्संग कार्यक्रम

नई दिल्ही

दि. २७-२८-२९ सितम्बर (गुरू-शुक्र-शनि), हररोज समय : शाम ६ से ८:३० - प्रश्नोत्तरी सत्संग
दि. ३० सितम्बर (रविवार), समय : ५ से ८:३० - **ज्ञानविधि**
स्थल : एम.पी.सी.यु. शाह ऑडिटोरियम, दिल्ही गुजराती समाज मार्ग, सिविल लाइन,
नई दिल्ही-११००५४. फोन : 011-65079497 / 9310022350

मुंबई

दि. ४-५ अक्तुबर (गुरू-शुक्र), शाम ६-३० से ९-प्रश्नोत्तरी सत्संग तथा ६ अक्तुबर शाम ५-३० से ८-**ज्ञानविधि**
स्थल : एस.वी.पी. हाईस्कूल ग्राउन्ड, शांतिलाल मोदी रोड, कांदिवली (वेस्ट). फोन : 022-24113875

भूज

दि. २६-२७-२९ अक्तुबर (शुक्र-शनि-सोम), हररोज समय : शाम ६-३० से ९ - प्रश्नोत्तरी सत्संग
दि. २८ अक्तुबर (रविवार), समय : ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि** फोन : 02832-231636
स्थल : श्री रसिकभाई कटीरा पार्टी प्लाट, वी.डी. हाईस्कूल के पास, लोहाणा समाजवाडी के पास.

राजकोट

दि. १-२-३ नवम्बर (गुरु-शुक्र-शनि), हररोज समय : शाम ७-३० से १० - प्रश्नोत्तरी सत्संग
दि. ४ नवम्बर (रविवार), समय : ६-३० से १० - **ज्ञानविधि**
स्थल : रेसकोर्स ग्राउन्ड, फनवर्ल्ड के पास. फोन : 9824065629, 9898656519

पूज्य नीरूमाँ को देखिये टी.वी. चैनल्स पर...

भारत ✦ 'दूरदर्शन' (नेशनल) पर सुबह ८-३० से ९ (सोम से शुक्र) 'नई दृष्टि, नई राह'
इसी समय देखिए, तमिलनाडु में तमिल में... आंध्रप्रदेश में तेलुगु में तथा केरल में मलयालम में...
✦ 'Zee Gujarati' पर हररोज सुबह ७ से ७-३० (गुजराती में)
✦ 'दूरदर्शन' डीडी-१ प्रतिदिन दोपहर ३-३० से ४ (गुजरात में) (अन्य राज्यो में डीडी ११ पर वही समय)
✦ 'आस्था इन्टरनेशनल' प्रतिदिन दोपहर १२-३० से १ (गुजराती में)
U.S.A. : ✦ 'TV Asia' Everyday 7 to 7-30 AM EST (In Gujarati)
✦ 'TV 39 (NJ)' Mon-Fri 6 to 7 PM & Sat 6 PM to 6-30 PM (In Gujarati)
Canada: ✦ 'ATN' Every Wed-Thu 8-30 to 9 AM EST
✦ समग्र विश्व में (भारत के अलावा) सोनी टीवी पर (सोम से शुक्र) सुबह ७ से ७-३०, (हिन्दी में)
✦ समग्र विश्व में (भारत के अलावा) 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) सुबह ८ से ८-३०

पूज्य दीपकभाई को देखिये टी.वी. चैनल्स पर...

भारत ✦ 'दूरदर्शन' डीडी-११ पर प्रतिदिन रात्रि ९ से ९-३० - 'ज्ञानप्रकाश' (गुजराती में)
✦ 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) रात्रि ११ से ११-३०, (शनि-रवि) दोपहर २ से २-३०
UK-Europe ✦ 'MA TV' पर प्रतिदिन शाम ५ से ५-३०
UK ✦ 'BSKYB' Satellite Channel 837, Sat 7:30 to 8:30 AM, Sun 7 to 8 AM
U.S.A. : ✦ 'Sahara One' DishTV Channel 624 & 797, Sat 7:30 to 8:30 AM, Sun 7 to 8 AM EST
समग्र विश्व में (भारत के अलावा) 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) शाम ६-३० से ७, शनि-रवि रात ८ से ८-३०

सितम्बर २००७
वर्ष-२, अंक ११

दादावाणी

RNI No. GUJHIN/17258/05
Reg. No. GAMC - 1500
Valid up to 31-12-08
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

प्रत्येक शब्द बोलने पर जागृति चाहिए

हम रियल (आत्मा) में मज़बूत होना चाहें तो रिलेटिव (सांसारिक) वस्तु को 'बहुत अच्छी' नहीं कहना चाहिए। 'बहुत अच्छी' कहने पर रियल के ऊपर दाग़ लगता है। क्योंकि वे सारी वस्तुएँ अच्छी हैं, मगर भ्राँति की हैं। हम जानते हैं कि रिलेटिव के हिसाब से वह सही है किन्तु 'बहुत अच्छी है' ऐसा हम बोलें तो हम पर उसका असर होता है। सचमुच हम पर उसका असर नहीं होना चाहिए।

- दादाश्री

Printed by Mahavideh Foundation - (079) 27542964,27540216

Publisher & Editor Mr. Deepakbhai Desai on behalf of Mahavideh Foundation
Printed at **Mahavideh Foundation Printing Press** :- Basement of Parshwanath Chambers,
Nr. New R.B.I. Income Tax Area, Ahmedabad - 14 and published from Registered Address of the Trust

कीमत - रू. १०